दीवान-ग़ालिब

.31
DIV
.4

A
91·431
Hun/ Div
2844

हमारे और प्रकाशन

— o —

महापुरुषों की प्रेमकथाएँ
इलाचन्द्र जोशी

— o —

उजाला
बलवन्त सिंह

— o —

पञ्जाब की कहानियाँ
बलवन्त सिंह

— o —

ससुराल
शौकत थानवी

— o —

हमारा गांधी वापस करो!
शरद

— o —

शैतान
शफ़ीकुर्रहमान

— o —

नारी का रूप
पाल बर्जे

— o —

लहर प्रकाशन
२-मिन्टो रोड : इलाहाबाद—२

दीवान-ग़ालिब

... COLLEGE OF
POONA 5.
... SCIENCE & COMMERCE

सम्पादक
महमूद अहमद 'हुनर'

A/2844
891·431
Hun/Div
891.431 - MAH
0 2844

लहर
प्रकाशन
२, मिन्टोरोड — इलाहाबाद — २

MODERN COLLEGE
POONA 5.

मूल्य--२॥)
पहला संस्करण

प्रकाशक :
ओंकार शरद
लहर प्रकाशन
२, मिंटोरोड, इलाहाबाद-२

मुद्रक :
दि इलाहाबाद ब्लाक वर्क्स लि०
ज़ीरोरोड, इलाहाबाद-३

प्रमुख वितरक
राजकमल प्रकाशन
दिल्ली : बम्बई : नई दिल्ली

"अगर कोई मुझसे पूछे कि हिन्दुस्तान की दो इलहामी (अपौरुषेय) किताबें कौन सी हैं तो मैं फौरन कहूँगा कि एक वेद मुक़द्दस (पवित्र) और दूसरी दीवान-ग़ालिब !"

—(डाक्टर) अब्दुर्रहमान बिजनौरी

MODERN COLLEGE
POONA 5.

प्रकाशकीय—

इस दीवान में ग़ालिब के सरल शेर ही संकलित किये गये हैं। पाठकों ने यदि इस संकलन को पसन्द किया तो परिवर्द्धित संस्करण में हम महाकवि ग़ालिब का पूरा कलाम देने की कोशिश करेंगे।

ग़ालिब—जीवन और कला

मिर्ज़ा असदुल्लाह खाँ 'ग़ालिब' उर्दू के वह युगप्रवर्तक कवि हैं जिनकी महानता आज के प्रगतिवादी युग में भी स्वीकार की जाती है। उर्दू शायरों में मीर तक़ी 'मीर' को छोड़ आजतक किसी शायर को मिर्ज़ा ग़ालिब की सी लोकप्रियता नहीं प्राप्त हुई। 'ग़ालिब' का दीवान कविता प्रेमियों के लिये धार्मिक पुस्तक का स्थान रखता है। उसके सैकड़ों संस्करण छप चुके हैं और दर्जनों विद्वानों ने 'ग़ालिब' की शायरी की व्याख्या और मीमांसा की है।

महाकवि ग़ालिब का जन्म सन् १७९६ में आगरा में हुआ। दिल्ली में शादी होने के कारण उनको दिल्ली वाले मिर्ज़ा नौशा कहते थे और बादशाह बहादुरशाह की ओर से उन्हें नज्मुद्दौल्ला, दबीरुलमुल्क, निज़ाम जंग के ख़िताब मिले थे।

मिर्ज़ा ग़ालिब को अपनी योग्यता की भाँति अपने कुलीन होने का भी गर्व था। मिर्ज़ा के पूर्वज ऐबक जाति के तुर्क थे और उनके दादा तरसम ख़ाँ शाह आलम के समय में समरक़न्द से भारत आये थे। मिर्ज़ा के पिता मिर्ज़ा अब्दुल्ला बेग ख़ाँ एक स्वच्छन्द और चंचल प्रकृति के सैनिक थे। वे कुछ दिनों अवध के दरबार में रहे, फिर हैदराबाद में निज़ाम की सेना में ३ सौ सवारों के नायक की हैसियत से काम करते रहे। अन्त में उन्होंने महाराजा अलवर की सेना में नौकरी कर ली और अलवर राज्य की ओर से लड़ते हुए मारे गये। पिता के देहान्त के समय मिर्ज़ा की आयु ५ वर्ष की थी। वह अब अपने चाचा मिर्ज़ा नसीरुल्ला बेग की छत्र छाया में रहने लगे; किन्तु ४ वर्ष बाद उनका भी देहान्त हो गया। इसके बाद मिर्ज़ा का पालन-पोषण उनके ननिहाल में होता रहा। मिर्ज़ा के पिता की मृत्यु के पश्चात अलवर राज्य की ओर से मिर्ज़ा और उनके भाई को दो गाँव मिले और कुछ मासिक पेन्शन भी बंध गई। मिर्ज़ा के चचा को अंग्रेज़ी सरकार की ओर से आगरा ज़िले में ही दो गाँव मिले थे। उनकी मृत्यु के पश्चात सरकार उनके वारिसों को सात सौ रुपया सलाना पेन्शन देती रही जो १८५७ ई० के ग़दर तक मिलती रही। लेकिन ग़दर के बाद क़िले से सम्बन्ध होने के कारण मिर्ज़ा की यह पेन्शन बन्द हो गई। ३ वर्ष बाद जब मिर्ज़ा के सम्बन्ध में अंग्रेज़ी

सरकार को विश्वास हो गया कि उनका बाग़ियों से कोई ताल्लुक़ नहीं था तो यह पेन्शन फिर जारी हो गई और अन्त समय तक मिलती रही।

मिर्ज़ा का बचपन आगरे में बीता। अरबी फ़ारसी की प्रारंभिक शिक्षा मिर्ज़ा ने आगरे के मशहूर आलिम शेख मुअज़्ज़म हुसैन से प्राप्त की। कहा जाता है कि कुछ प्रारंभिक पुस्तकें मिर्ज़ा को प्रसिद्ध उर्दू शायर 'नज़ीर' अकबराबादी ने भी पढ़ाई थीं। जब मिर्ज़ा की उम्र १४ वर्ष की हुई तब उन्हें फ़ारसी का एक बहुत बड़ा पंडित शिक्षक के रूप में मिल गया। मिर्ज़ा के इस शिक्षक का पारसी नाम हुरमुज़ था जो इस्लाम धर्म ग्रहण करने के बाद मुल्ला अब्दुल समद के नाम से प्रसिद्ध हो गया था। मिर्ज़ा ने उससे दो वर्ष तक फ़ारसी पढ़ी। मिर्ज़ा का झुकाव शुरू से ही फ़ारसी की ओर था। अतएव अपने इस गुरु से उन्होंने बहुत कुछ सीखा। अपने गुरु पर मिर्ज़ा को बड़ा गर्व था क्योंकि उनकी शिक्षा ने ही मिर्ज़ा को फ़ारसी का ऐसा पंडित बना दिया था कि वह ईरानियों की भाँति फ़ारसी बोल और लिख सकते थे।

मिर्ज़ा का विवाह नवाब लुहारू के छोटे भाई नवाब इलाही बख्श ख़ाँ 'मारूफ़' की सुपुत्री से दिल्ली में हुआ। उस समय मिर्ज़ा की उम्र तेरह वर्ष की थी। विवाह के पश्चात मिर्ज़ा का दिल्ली आना जाना होने लगा और अन्त में आगरा छोड़ वह स्थायी रूप से वहीं बस गये। दिल्ली के वायु मंडल में उस समय शायरी गूँज रही थी और मुशायरों की धूम थी। मिर्ज़ा की शादी भी एक प्रसिद्ध शायर की बेटी से हुई थी। अतः उनके हृदय में भी शायरी की उमंग उठी और वह इस मैदान मे कूद पड़े। उनकी शायरी फ़ारसी में शुरू हुई या उर्दू में, इस विषय पर इतिहासकार

एक मत नहीं हैं। लेकिन फ़ारसी भाषा पर मिर्ज़ा को जो अधिकार प्राप्त था उससे यही अनुमान होता है कि उन्होंने पहले फ़ारसी में शेर कहे होंगे। इस विचार की पुष्टि मिर्ज़ा के आरम्भ के उर्दू कलाम को देख कर भी होती है जिसमें फ़ारसी शब्दों की इतनी भरमार है कि केवल एक शब्द बदल देने से वे फ़ारसी बन जाते हैं। इसी प्रकार उनकी प्रारंभिक शायरी भाषा की दृष्टि से तो कठिन है ही, भाव की दृष्टि से भी वह बड़ी क्लिष्ट है। इसका मुख्य कारण यह है कि ग़ालिब ने उर्दू शायरी में भी प्रसिद्ध फ़ारसी कवि 'बेदिल' का रंग अपनाया जो सीधी बात को भी बहुत घुमा फिरा कर कहने और विचित्र-विचित्र उपमाओं के लिये प्रसिद्ध हैं। इसका फल यह हुआ कि मिर्ज़ा भी सीधी सादी बात को विचित्र उपमाओं और कठिन से कठिन शब्दों में कहने का प्रयास करने लगे। कभी कभी मिर्ज़ा इस प्रयास में सफल भी हो जाते थे और शेर में नई बात पैदा हो जाती थी। लेकिन अधिकांश शेर नीरस और कभी कभी तो बिलकुल ही बेमानी हो जाते। उनकी इसी प्रकार की शायरी देख महा कवि 'मीर' ने यह भविष्य वाणी की थी कि इस लड़के को अगर कोई कामिल उस्ताद मिल गया और उसने इसको सीधे रास्ते पर डाल दिया तो यह लाजवाब शायर बन जायगा वरना मोहमल बकने लगेगा।

मिर्जा ग़ालिब ने शायरी में किसी को अपना उस्ताद ही नहीं बनाया। स्वयं अपने गुण दोषों की विवेचना करते रहे और अपने लिये रास्ता खोजते रहे। इसी खोजने उन्हें रहस्यवादी कवि बनने से बचा लिया और वह भाषा तथा भाव की सरलता की ओर खिंच आये।

उनकी प्रतिभा ग़ज़ब की थी और उनकी योग्यता अद्वितीय थी। अतएव उनकी कल्पना की उड़ान वैसी ही ऊँची रही। साथ ही भाषा की सरलता के कारण साधारण लोग भी उनकी शायरी समझने लगे।

मिर्ज़ा के समकालीन कवियों और विद्वानों में 'ज़ौक़' 'मोमिन,' 'नसीर' मौलाना 'आ़ज़ुर्दा, नवाब 'शेफ़्ता,' नबी बख़्श 'हक़ीर', 'मौलवी इमाम बख़्श सहबाई और मौलवी फ़ज़्ल हक़ ख़ैराबादी के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। मिर्ज़ा बड़े उदार चित्त और बड़े विनम्र स्वभाव के आदमी थे, फिर भी कुछ लोगों से उनकी ख़ूब नोक झोंक रहती थी। कुछ तो इससे कि मिर्ज़ा हिन्दुस्तान में अमीर ख़ुसरो और 'फ़ैज़ी' के अतिरिक्त किसी फ़ारसी कवि की महानता स्वीकार न करते थे और कुछ इस कारण कि उनकी शायरी बड़ी कठिन होती थी, कुछ लोग, जिनमें मौलाना आ़ज़ुर्दा और ज़ौक़ तथा उनके शिष्य भी शामिल थे, मिर्ज़ा की शायरी की बहुधा हंसी उड़ाया करते थे। मिर्ज़ा ने उन लोगों को कई जगह जवाब दिया है। एक जगह कहते हैं :—

न सतायश की तमन्ना न सिले की परवा
न सही गर मेरे अशआर में मानी न सही

एक और जगह आपत्ति करने वालों की नासमझी का इस प्रकार वर्णन करते हैं :—

मुश्किल है ज़बस कलाम मेरा ए दिल
सुन सुनके उसे सुख़नवराने-कामिल।
आसाँ कहने की करते हैं फ़रमायश
गोयम मुश्किल वगर न गोयम मुश्किल

अंतिम पंक्ति का एक अर्थ तो यह है कि मैं शेर कहता हूँ तो लोग उसे मुश्किल बताते हैं और मुश्किल नहीं कहता यानी आसान कहता हूँ तो भी मुश्किल है क्योंकि यह मेरी तबियत के खिलाफ़ है । दूसरा मतलब यह है कि इस विषय में साफ़ साफ़ कहूँ तो आपत्ति करने वालों की मूढ़ता प्रकट करनी पड़ती है, यह भी मेरे स्वभाव तथा शिष्टता के खिलाफ़ है और साफ़ साफ़ बात नहीं कहता तो अपने ऊपर इलज़ाम आता है । हर हाल में मुश्किल है ।

मिर्ज़ा ने एक बार एक सरल शेर सुनाया--

लाखों लगाव एक चुराना निगाह का,
लाखों बनाव एक बिगड़ना अताब में ।

यह शेर जितना सरल है उतना ही ऊँचा भी है । मौलाना आज़ुर्दा ने तारीफ़ तो की किन्तु साथ ही यह भी कह दिया कि इसमें मिर्ज़ा की क्या खूबी है, यह तो हमारी तर्ज़ का शेर है, यानी ऐसे सरल शेर तो हम लोग कहते हैं । कभी कभी लोग मुशायरों में खुल्लम खुला भी चोट किया करते थे । वे ऐसे शेर लिख कर लाते और मुशायरों में सुनाते जिनमें अरबी फ़ारसी के क्लिष्ट शब्द तो खूब होते किन्तु अर्थ कुछ न होता । ऐसे शेरों की दूसरे लोग यह कहकर दाद देते कि मिर्ज़ा ग़ालिब के रंग में क्या खूब शेर कहा है । एक बार हकीम आग़ा जान ने मुशायरे में मिर्ज़ा को सम्बोधित कर यह क़ता (चौपदा) पढ़ा —

अगर अपना कहा तुम आप ही समझे तो क्या समझे ।
मज़ा कहने का जब है एक कहे और दूसरा समझे ।

कलामे-मीर[1] समझे और ज़बाने मीरज़ा[2] समझे ।
मगर इनका कहा ये आप समझें या ख़ुदा समझे ॥

परन्तु मिर्ज़ा ग़ालिब ने कभी इन लोगों की कोई ख़ास परवाह नहीं की । वह इसे अपना दोष न समझते थे वरन उन लोगों का क़ुसूर समझते थे जो उनकी ऊँची शायरी को समझ न पाते थे । आख़िर एक बार बहुत झुँझला कर उन्हों ने फ़ारसी में अपने विरोधियों से साफ़ कह दिया कि तुम्हें जिस उर्दू शायरी पर नाज़ है मैं उस भाषा में शेर कहना अपने लिये शर्म की बात समझता हूँ । वास्तव में मिर्ज़ा को अपनी फ़ारसी शायरी पर बड़ा नाज़ था । वह कभी किसी उर्दू शायर से अपना मुक़ाबला न करते थे लेकिन अपने उर्दू कलाम को भी किसी के कलाम से नीचा न समझते थे । २५ वर्ष की आयु तक उनका झुकाव मुश्किल शायरी की ओर रहा लेकिन जब मिर्ज़ा को अपनी भूल का अनुभव हुआ तो वह उर्दू की ओर झुके । जिस उर्दू को वह अपनी शायरी के लिए अयोग्य समझते थे उसी उर्दू भाषा को उन्होंने अपनी शायरी का माध्यम बनाया । मिर्ज़ा ग़ालिब ने ऐसा क्यों किया ? या, वह ऐसे करने के लिए क्यों मजबूर हुए ! बात सरल सी है । मिर्ज़ा की आरम्भिक शिक्षा-दीक्षा उर्दू नहीं फ़ारसी में हुयी थी । फ़ारसी भाषा और साहित्य पर उन्हें पूरा अधिकार प्राप्त हो गया था । इसलिए वह फ़ारसी में शायरी करने में सरलता अनुभव करते थे । दूसरी बात यह थी कि मिर्ज़ा शब्दों और वाक्यों को बहुत महत्व देते थे । फ़ारसी के शब्दों और वाक्यों में जो प्रज्वालता थी, जो परिमार्जन था, जो अर्थ गाम्भीर्य था वह नवनिर्मित उर्दू भाषा में न

---

१ मीर तक़ी मीर । २– मिर्ज़ा सौदा

था। फ़ारसी बन चुकी थी। उसका उत्कृष्ट रूप सामने आ चुका था। उर्दू का परिमार्जन हो रहा था, वह बन-संवर रही थी, उसका उत्कृष्ट रूप अभी सामने आने को था। तीसरी बात यह थी कि मिर्ज़ा अब तक अपनी जनता, अपने श्रोताओं तथा पाठकों से अधिक स्वयं अपने मानसिक और आध्यात्मिक संतोष के लिए प्रयत्नशील थे। जब, बाद के दिनों में उनकी चेतना बदली और वैचारिक परिपक्वता के साथ सामाजिक कर्तव्यों और ज़िम्मेदारियों के प्रति उनकी जागरुकता बढ़ी तो उन्होंने उर्दू का माध्यम अपनाना शुरू किया और उनके द्वारा तिरस्कृता उर्दू उन्हीं के हाथों से सजधज कर शोख़, सुन्दर, आकर्षक, ओजपूर्ण, अति परिष्कृत और जानदार भाषा बन गयी। मिर्ज़ा का सम्पर्क प्राप्त कर उर्दू भाषा और साहित्य का पुनर्जन्म सा हो गया।

मिर्ज़ा 'ग़ालिब' कई दृष्टियों से विद्रोही तथा स्वतन्त्र बुद्धि के कवि थे। उन्होंने ग़ज़ल की पुरानी सर्व स्वीकृत परम्परा को तोड़ा। उन्होंने मतला और मक़ता के बन्धनों से अपने को मुक्त किया। उन्होंने इसकी भी पर्वाह न की कि इनकी ग़ज़लों में कितने शेर हैं। जहाँ जैसा जब भी रुचा मिर्ज़ा ने कर लिया, कर लिया। उस समय ग़ज़लों को दीवान में शामिल करते समय काटने-छाँटने या छोड़ देने की प्रथा न थी। शेरों को 'लख़्ते-जिगर' कहा जाता था। भला कोई अपने कलेजे के टुकड़े को कैसे काट देता ? मगर मिर्ज़ा अच्छे गुलदस्ते को सजाने के लिए ख़राब सड़े-गले फूलों को उठा कर फेंक सकते थे। मिर्ज़ा ने ऐसा करके अपूर्व हिम्मत का परिचय दिया। इसीलिए उनके दीवान में लग़्व या ओछे और कमज़ोर शेरों को ढूंढ़ पाना मुश्किल है। मिर्ज़ा ने ग़ज़लों की विषय

वस्तु को भी बदल दिया। आशिक़-माशूक़ों के आपसी झगड़ों, गिला-शिकवों, विरह-वियोग के रोने धोने की सीमा से हट कर मिर्ज़ा जीवन की गहराइयों में उतरे, तात्विक बातों की ओर दृष्टि डाली, मूलभूत संवेदनाओं को मुखर किया और आगे आने वाली पीढ़ी को नये भाव, नए विचार, नयी प्रेरणा और नयी दृष्टि दी। मिर्ज़ा ने उर्दू शब्दावली को नयी शोख़ी चुलबुलपन, बांकपन, और पुष्टता प्रदान की। भाव-भाषा का ऐसा सुन्दर संगम अन्यत्र कहाँ मिलेगा ? मिर्ज़ा ने अपने माशूक़ को ईश्वरता प्रदान की। 'भारतेन्दु के' "नखरा राह राह को नीको" की गूंज इसीलिए हमें मिर्ज़ा ग़ालिब के शेरों में अक्सर यहाँ-वहाँ सुनायी दे जाती है।

मिर्ज़ा ग़ालिब ने अपने साहित्य में सामाजिक और राजनीतिक चेतना को उतनी प्रधानता न दी जितनी प्रधानता उन्होंने व्यक्ति जनित पीड़ा, कुण्ठा, वेदना और सहानुभूति को दी। इसके अनेक कारण थे। मगर ग़ालिब पर यह आरोप नहीं लगाया जा सकता कि उनमें जातीय अथवा राष्ट्रीय स्वाभिमान की कमी थी या वह सामाजिक चेतना की उपेक्षा करते थे। हाँ, यह सही है उनकी संवेदना बहुत अंशों में व्यक्ति परक थी समाज-परक नहीं। यही उनकी कमज़ोरी थी और शायद यही उनकी सबसे बड़ी शक्ति भी थी। सूरदास की "ऊधो मन नाहीं दस बीस" की भाव धारा व्यक्ति परक है परन्तु वह हमारे हृदय के मूल तारों की प्रतिध्वनि भी है। इसी तरह ग़ालिब की—

—इब्ने मरियम हुआ करे कोई

मेरे दुख की दवा करे कोई उसी असीम वेदना और पीड़ा का

POONA

था। फ़ारसी बन चुकी थी। उसका उत्कृष्ट रूप सामने आ चुका था। उर्दू का परिमार्जन हो रहा था, वह बन-संवर रही थी, उसका उत्कृष्ट रूप अभी सामने आने को था। तीसरी बात यह थी कि मिर्ज़ा अब तक अपनी जनता, अपने श्रोताओं तथा पाठकों से अधिक स्वयं अपने मानसिक और आध्यात्मिक संतोष के लिए प्रयत्नशील थे। जब, बाद के दिनों में उनकी चेतना बदली और वैचारिक परिपक्वता के साथ सामाजिक कर्तव्यों और ज़िम्मेदारियों के प्रति उनकी जगरुकता बढ़ी तो उन्होंने उर्दू का माध्यम अपनाना शुरू किया और उनके द्वारा तिरस्कृता उर्दू उन्हीं के हाथों से सजधज कर शोख, सुन्दर, आकर्षक, ओजपूर्ण, अति परिष्कृत और जानदार भाषा बन गयी। मिर्ज़ा का सम्पर्क प्राप्त कर उर्दू भाषा और साहित्य का पुनर्जन्म सा हो गया।

मिर्ज़ा 'ग़ालिब' कई दृष्टियों से विद्रोही तथा स्वतन्त्र बुद्धि के कवि थे। उन्होंने ग़ज़ल की पुरानी सर्व स्वीकृत परम्परा को तोड़ा। उन्होंने मतला और मक़ता के बन्धनों से अपने को मुक्त किया। उन्होंने इसकी भी पर्वाह न की कि इनकी ग़ज़लों में कितने शेर हैं। जहाँ जैसा जब भी रचा मिर्ज़ा ने कर लिया, कर लिया। उस समय ग़ज़लों को दीवान में शामिल करते समय काटने-छांटने या छोड़ देने की प्रथा न थी। शेरों को 'लख्ते-जिगर' कहा जाता था। भला कोई अपने कलेजे के टुकड़े को कैसे काट देता ! मगर मिर्ज़ा अच्छे गुलदस्ते को सजाने के लिए खराब सड़े-गले फूलों को उठा कर फेंक सकते थे। मिर्ज़ा ने ऐसा करके अपूर्व हिम्मत का परिचय दिया। इसीलिए उनके दीवान में लग्व या ओछे और कमज़ोर शेरों को ढूंढ़ पाना मुश्किल है। मिर्ज़ा ने ग़ज़लों की विषय

वस्तु को भी बदल दिया। आशिक़-माशूक़ों के आपसी झगड़ों, गिला-शिकवों, विरह-वियोग के रोने धोने की सीमा से हट कर मिर्ज़ा जीवन की गहराइयों में उतरे, तात्विक बातों की ओर दृष्टि डाली, मूलभूत संवेदनाओं को मुखर किया और आगे आने वाली पीढ़ी को नये भाव, नए विचार, नयी प्रेरणा और नयी दृष्टि दी। मिर्ज़ा ने उर्दू शब्दावली को नयी शोखी चुलबुलपन, बांकपन, और पुष्टता प्रदान की। भाव-भाषा का ऐसा सुन्दर संगम अन्यत्र कहाँ मिलेगा ? मिर्ज़ा ने अपने माशूक़ को ईश्वरता प्रदान की। 'भारतेन्दु के' "नखरा राह राह को नीको" की गूंज इसीलिए हमें मिर्ज़ा ग़ालिब के शेरों में अक्सर यहाँ-वहाँ सुनायी दे जाती है।

मिर्ज़ा ग़ालिब ने अपने साहित्य में सामाजिक और राजनीतिक चेतना को उतनी प्रधानता न दी जितनी प्रधानता उन्होंने व्यक्ति जनित पीड़ा, कुण्ठा, वेदना और सहानुभूति को दी। इसके अनेक कारण थे। मगर ग़ालिब पर यह आरोप नहीं लगाया जा सकता कि उनमें जातीय अथवा राष्ट्रीय स्वाभिमान की कमी थी या वह सामाजिक चेतना की उपेक्षा करते थे। हाँ, यह सही है उनकी संवेदना बहुत अशों में व्यक्ति परक थी समाज-परक नहीं। यही उनकी कमज़ोरी थी और शायद यही उनकी सबसे बड़ी शक्ति भी थी। सूरदास को "ऊधो मन नाहीं दस बीस" की भाव धारा व्यक्ति परक है परन्तु वह हमारे हृदय के मूल तारों की प्रतिध्वनि भी है। इसी तरह ग़ालिब की—

—इब्ने मरियम हुआ करे कोई
मेरे दुख की दवा करे कोई उसी असीम वेदना और पीड़ा का

परिचायक है जिसने गोपियों को ऊधो की ज्ञान चर्चा को उपेक्षा करने की शक्ति दी थी मिर्ज़ा ग़ालिब के साहित्य में दार्शनिक अभिव्यक्तियों से अधिक यदि हमें संवेदन शीलता, सहानुभूति और दुख-कातरता मिलती है तो हमें इस पर संतोष करना चाहिए क्यों कि आदि कवि वाल्मिकि से लेकर आज तक कवि परम्परा आँसुओं से भीगी चलती रही है, मात्र ज्ञान के प्रकाश में उसने अपना पंथ नहीं निहारा है !

'करुणा' मानव स्वभाव की मानवीयता की सबसे बड़ी गारण्टी है और मिर्ज़ा ग़ालिब की 'करुणा' आजभी हमारी पलकों को भिगो देती है क्यों कि यह करुणा मिर्ज़ा ग़ालिब के हृदय की पुकार है, ऐसी पुकार जिसकी प्रतिध्वनियाँ हृदय-हृदय में, कण्ठ-कण्ठ में सुनायी देती है । इसी 'करुणा' के सहारे मिर्ज़ा ग़ालिब सचमुच "लाजवाब शायर" हो गये और महाकवि 'मीर' की भविष्यवाणी सत्य साबित हुई ।

महमूद अहमद
'हुनर'

कहते हो न देंगे हम, दिल अगर पड़ा पाया
दिल कहाँ कि गुम कीजे, हमने मुद्दआ[1] पाया ।
इश्क़ से तबीअत ने ज़ीस्त[2] का मज़ा पाया
दर्द की दवा पाई दर्दे बेदवा पाया ।
दोस्तदारे-दुश्मन[3] है एतमादे-दिल[4] मालूम
आह बेअसर देखी नाला[5] नारसा[6] पाया ।
सादगी व पुरकारी,[7] बेख़ुदी[8] व हुशियारी
हुस्न को तग़ाफ़ुल[9] में जुरअत-आज़मा[10] पाया ।
गुंचा[11] फिर लगा खिलने, आज हमने अपना दिल
ख़ूँ किया हुआ देखा, गुम किया हुआ पाया ।
हाले-दिल नहीं मालूम, लेकिन इस क़दर यानी
हमने बारहा ढूँढा तुमने बारहा पाया ।
शोरे पन्दे-नासेहने[12] ज़ख़्म पर नमक छिड़का
आपसे कोई पूछे तुमने क्या मज़ा पाया ।

---

१ — अभिप्राय । २ — जीवन । ३ — दुश्मन का दोस्त । ४ — दिल का विश्वास । ५ — रुदन । ६ - पहुँच से बाहर । ७ - चालाकी । ८ — आत्मविस्मृति । ९ — उपेक्षा । १० — साहस की परीक्षा लेने वाला । ११ — कली । १२ — उपदेशक के उपदेश के शोर ने ।

(२)

दिल मेरा सोज़े-निहाँ[1] से बेमहाबा[2] जल गया
आतिशे-ख़ामोश[3] की मानिन्द गोया जल गया ।
दिल में ज़ौके-वस्ल-ओ-यादे-यार तक बाक़ी नहीं[4]
आग इस घर में लगी ऐसी कि जो था जल गया ।
मैं अदम[5] से भी परे हूँ वरना ग़ाफ़िल बारहा
मेरी आहे-आतशीं से[6] बाले-उनक़ा[7] जल गया ।
अर्ज़ कीजे, जौहरे-अन्देशा[8] की गर्मी कहाँ
कुछ ख़याल आया था वहशत[9] का कि सहरा जल गया ।
दिल नहीं तुझको दिखाता वरना दाग़ों की बहार
इस चराग़ाँ[10] का करूँ क्या कारफ़रमा[11] जल गया ।
मैं हूँ और अफ़सुर्दगी[12] की आरज़ू 'ग़ालिब' कि दिल
देख कर तर्ज़े-तपाके-अहले-दुनिया[13] जल गया ।

(३)

शौक़ हर रंग रक़ीबे-सर-ओ-सामाँ[14] निकला
क़ैस तस्वीर के पर्दे में भी उरियाँ[15] निकला ।

१—आन्तरिक गर्मी, तपन । २—एकदम । ३—मौन अग्नि । ४—दिल में प्रिय की याद और मिलने की इच्छा तक बाक़ी नही रही । ५—न होने, अर्थात मुर्दों से भी गया बीता हूँ । ६—गर्म आह । ७—उनका-एक काल्पनिक पक्षी का पंख या पर । उर्दू कविता में जब कोई चीज़ मिट कर अस्तित्व हीन हो जाती है तो उसकी उपमा उनक़ा पक्षी से दी जाती है । ८—विचार का जौहर या सार । ६ पागलपन । १०—दीपमाला । ११—काम करने वाला, प्रेरक । १२—उदासी । १३—दुनिया वालों की उपेक्षा देख कर । १४—सरोसामान का दुश्मन । १५—नग्न ।

ज़ख़्म ने दाद न दी तंगिये-दिल ने यारब
तीर भी सीनए-बिस्मिल[1] से पर-अफ़शाँ[2] निकला ।
बूए-गुल[3], नालए-दिल[4], दूदे चराग़े-महफ़िल[5]
जो तेरी बज़्म[6] से निकला सो परीशाँ निकला ।
थी नौ-आमोज़े फ़ना हिम्मते-दुश्वार पसन्द[7]
सख़्त मुश्किल है कि यह काम भी आसाँ निकला ।
दिल में फिर गिरिया[8] ने एक शोर उठाया 'ग़ालिब'
आह जो क़तरा न निकला था, सो तूफ़ाँ निकला ।

(४)

जाती है कोई कशमकश[9] अन्दोहे-इश्क़[10] की
दिल भी अगर गया तो वही दिल का दर्द था ।
अहबाब[11] चारासाज़िये-वहशत[12] न कर सके
ज़िन्दाँ[13] में भी ख़याले-बयाबाँ-नवर्द था[14] !
यह लाशे-बे-कफ़न 'असदे-'ख़स्ता जाँ[15] की है
हक़ मग़फ़रत करे अजब आज़ाद मर्द था ।

१—घायल की छाती । २—पर खोले हुए । ३—फूल की सुगंध । ४—हृदय का रुदन । ५—महफ़िल के चिराग़ का धुआँ । ६—महफ़िल । ७—फ़ना-मृत्यु, नौ आमोज़=नया विद्यार्थी । दुश्वार-पसन्द=कठिनाइयों को पसन्द करने वाली । यानी कठिनाइयों को पसन्द करने वाली मेरी हिम्मत ने इश्क़ की राह को, जो मृत्यु की तरह भयानक होती है, एक नये विद्यार्थी की भांति बिना उससे भयभीत हुए ही पार कर लिया । ८—रुदन । ९—खींचतान । १०—प्रेम के दुःख । ११—मित्रगण । १२—पागलपन का इलाज । १३—जेल । १४—जंगल में घूमने का विचार । १५—दुखी, थके हुए । १६—हक़=ईश्वर, मग़फ़रत करे=बख्श दे, क्षमा करे ।

बाग़ में मुझको न लेजा वरना मेरे हाल पर
हर गुले-तर[१] एक चश्मे-खूँफ़शाँ[२] हो जायगा।
वाय[३] गर तेरा मेरा इन्साफ़ महशर[४] में न हो
अब तलक तो यह तवक़्क़ा[५] है कि वाँ हो जायगा।
फ़ायदा क्या सोच आख़िर तू भी है दाना[६] 'असद'
दोस्ती नादाँ की है जी का ज़ियाँ[७] हो जायगा।

(१५)

दर्द मिन्नत कशे-दवा[८] न हुआ
मैं न अच्छा हुआ बुरा न हुआ।
जमअ करते हो क्यों रक़ीबों[९] को
एक तमाशा हुआ गिला[१०] न हुआ।
हम कहाँ क़िस्मत आज़माने जायँ
तू ही जब खंजर आज़मा[११] न हुआ।
कितने शीरीं[१२] हैं तेरे लब,[१३] कि रक़ीब
गालियाँ खा के बेमज़ा न हुआ।

१—ताज़ा खिला फूल। २—खून बरसाती आँख। ३—हाय। ४—क़यामत का दिन, जब ईश्वर सब के पुण्य और पाप का न्याय करेगा। ५—आशा। ६—समझदार। ७—जंजाल ८—दवा का एहसान दर्द ने न लिया। ९—प्रतिद्वंदियों। १०—शिकायत। ११—खञ्जर आज़माने अर्थात् मुझे मारने के लिये उसका प्रयोग करने। कहते हैं कि जब तू ही न मारेगा तो हम अपना भाग्य और कहाँ आज़मायें। मतलब यह कि हम तो तेरे ही हाथों मरना चाहते हैं। १२—मधुर। १३—होंठ। गालियाँ खाके भी रक़ीब खफ़ा नहीं हुआ। इससे प्रकट होता है कि तेरे होंठ कितने मधुर हैं। यहाँ खफ़ा होने को बे मज़ा इसलिये कहा है कि होंठों को मीठा कह चुके हैं।

है ख़बर गर्म उनके आने की
आज ही घर में बोरिया न हुआ।
क्या वह नमरूद[१] की .खुदाई थी?
बन्दगी में मेरा भला न हुआ।
जान दी, दी हुई उसी की थी
हक़[२] तो यह है कि हक़[३] अदा न हुआ।
कुछ तो पढ़िये कि लोग कहते हैं
आज 'ग़ालिब' ग़ज़ल-सरा[४] न हुआ।

(१६)

ग़मे-फ़िराक़ में तकलीफ़े सैरे-बाग़ न दे
मुझे दिमाग़ नहीं खन्दःहाय-बेजा[५] का।

१—एक बादशाह जिसने अपने को ईश्वर मनवाना चाहा था। कहते हैं कि मेरी बन्दगी (पूजा) क्या नमरूद की खुदाई थी कि मुझे कोई लाभ न हुआ। २, ३—पहले 'हक़' का अर्थ है सत्य और दूसरे का अर्थ है फ़र्ज़ या कर्त्तव्य। कहते हैं कि मैंने जान भी दे दी तो क्या हुआ, क्योंकि यह तो उसी की प्रदान की हुई थी। परन्तु सत्य तो यह है कि मैंने जीवन में कभी भी इस ईश्वरीय देन के लिये उसको धन्यवाद नहीं दिया और इस कर्त्तव्य की अवहेलना करता रहा। ४—ग़ज़ल पढ़ने वाला। ५—अनुचित हँसी। कहते हैं कि मैं विरह के दुख से स्वयं दुखी हूँ। मुझे बाग़ की सैर से आनन्द की जगह कष्ट ही होगा, क्योंकि फूल अपनी प्रकृति के अनुसार हँसेंगे (खिलेंगे) अवश्य और मैं उनकी इस अनुचित हँसी को सह नहीं सकता।

दिल उसको पहले ही नाज़-ओ-अदा से दे बैठे
हमें दिमाग़ कहाँ, हुस्न के तक़ाज़ा का[1]।

फ़लक[2] को देख के करता हूँ उसको याद 'असद'
जफ़ा में उसकी है अन्दाज़ कार फ़रमा[3] का।

(१७)

एतबारे इश्क़[4] की ख़ाना ख़राबी देखना
ग़ैर ने की आह लेकिन वह ख़फ़ा मुझ पर हुआ।

(१८)

जब बतक़रीबे-सफ़र[5] यार ने महमिल[6] बाँधा
तपिशे-शौक़[7] ने हर ज़र्रे पै एक दिल बाँधा।

१—कहते हैं कि हम तो उसके नाज़ अन्दाज देख पहले ही दिल दे बैठे। भला इतना धैर्य कहाँ होता कि उसके मांगने की प्रतीक्षा करते। २—आकाश। ३—वह महान शक्ति जो आकाश को जफ़ा (अत्याचार) करने की आज्ञा देती है। इस शेर में कहा गया है कि जब आकाश को देखता हूँ तो तेरी याद आ जाती है। क्योंकि उसकी जफ़ाओं में भी तेरी ही जफ़ाओं का रंग झलकता है। ४—इश्क़ का विश्वास। मेरे प्रेम का उसे इतना विश्वास है कि कोई दूसरा भी आह करता है तो वह यही समझता है कि यह मेरा काम है और मुझ पर नाराज होता है। ५—यात्रा के लिये। ६—ऊँट पर बैठने के लिए पर्देदार कजावा। इस शेर का मतलब है कि जब प्रिय ने एकांत से निकल सब को दर्शन देने की तैयारी की तब शौक़ की गर्मी से प्रत्येक कण एक व्याकुल हृदय बन गया और तड़पने लगा। ७—शौक़ की प्यास।

न बँधे तिश्नगिये-शौक़[1] के मज़मूँ 'ग़ालिब'
गरचे दिल खोल के दरिया को भी साहिल बाँधा।

(१९)

मैं और बज़्मे मय[2] से यूँ तिश्ना[3] काम आऊँ
गर मैंने की थी तौबा साक़ी को क्या हुआ था।
है एक तीर जिसमें दोनों छिदे हुए हैं
वह दिन गये कि अपना दिल से जिगर जुदा था।

(२०)

घर हमारा जो न रोते भी तो वीराँ होता
बह्र[4] अगर बह्र न होता तो बियाबाँ[5] होता।
तंगिये-दिल[6] का गिला क्या ये वो काफ़िर दिल है
कि अगर तंग न होता तो परेशाँ होता।

१—कूल, किनारा। किनारे को प्यासा कहते हैं क्योंकि वह हर समय नदी पर झुका रहता है। ग़ालिब कहते हैं कि हमने अतिशयोक्ति से काम लेकर नदी को भी किनारा लिखा पर शौक़ की प्यास दिखलाने की चेष्टा सफल न हो सकी, मेरी वर्णन शक्ति निष्फल रही। २—शराब की महफ़िल। ३ अतृप्त। ४—समुद्र। ५—जंगल। घर को वीरान तो होना ही था। रोये तो आँसुओं की नदी ने वीरान कर दिया। न रोते तो भी उसी तरह वीरान होता जैसे समुद्र के सूख जाने पर मैदान बन जाता है। ६—दिल की तङ्गी का अर्थ है उदासी और दुख। कहते हैं कि इस दिल की तंगी की क्या शिकायत करूँ। यह वह ज़ालिम है कि यदि उदास और दुखी न होता तो परेशान होता। शान्ति तो इसके भाग्य में है ही नहीं।

(२१)

न था कुछ तो खुदा था, कुछ न होता तो खुदा होता
डबोया मुझको होने ने न मैं होता तो क्या होता।※

हुई मुद्दत कि 'ग़ालिब' मर गया पर याद आता है
वो हर एक बात पर कहना कि यूँ होता तो क्या होता।

(२२)

बुलबुल के कारबार पै हैं ख़न्दाहाय गुल[1]
कहते हैं जिसको इश्क़ ख़लल[2] है दिमाग़ का।

(२३)

शर्हे-असबाबे-गिरफ्तारिये-ख़ातिर[3] मत पूछ
इस क़दर तंग हुआ दिल कि मैं ज़िन्दाँ[4] समझा।

※ इस शेर में बिलकुल नए ढङ्ग से अस्ति से नास्ति को बढ़ाया है। कहते हैं कि मैं न होता तो यह देखना है कि मैं क्या चीज़ होता, मतलब है कि ख़ुदा होता। इसीलिये अपने 'होने' पर दुख प्रकट करते हैं और 'न होने' अर्थात् 'नास्ति' को अच्छा समझते हैं।

१—फूल की हँसी। २—ख़राबी। बुलबुल के कारबर से मतलब है उसका रोना धोना, फूलों से प्रेम करना। ३—गिरफ़्ता ख़ातिरी और दिल तङ्गी दोनों का एक ही अर्थ है—परेशानी, चिन्तित रहना। ४—क़ैदखाना। कहते हैं कि प्रेम के कारण मुझे जो दुख उठाने पड़े और परेशानी हुई उसके कारणों का विस्तार क्या पूछते हो। मेरा दिल इतना तङ्ग हो गया कि मैंने उसे क़ैद ख़ाना समझ लिया।

(२४)

फिर मुझे दीदए-तर[1] याद आया
दिल जिगर तिशनए-फ़रियाद[2] आया।

दम लिया था न क़यामत ने हनोज़[3]
फिर तेरा वक़्ते-सफ़र याद आया।

सादगीहाय तमन्ना यानी
फिर वो नैरंगे-नज़र[4] याद आया।

उज्रे-वामांदगी[5] ए हसरते-दिल
नाला करता था जिगर याद आया।

ज़िन्दगी यूं भी गुज़र ही जाती
क्यों तेरा राह गुज़र[6] याद आया।

१—सजल नेत्र। २—फ़रियाद के प्यासे। मैंने दिल और जि
को फ़रियाद का इच्छुक देखा तो मुझे अपनी आँख के आँसू याद
गये। मैंने रोना इसीलिये शुरू कर दिया कि दिल और जिगर कुछ ह
हो जायँ और फ़रियाद करने की प्यास मिट जाय। ३—अभी। तेरे
से जो क़यामत (असीम दुख) हुई थी उसका प्रभाव अभी
नहीं हुआ था कि तेरे विदा होने का समय फिर याद आ गय
४—निगाह का जादू। ५—असमर्थता तथा विनम्रता। दिल को
रत है कि ख़ूब ज़ोर से फ़रियाद करे। पर मैं असमर्थता दिखलाता
कारण कि फ़रियाद के प्रभाव से जिगर फट चुका है और उसका
हो गया है। अब कहीं दिल की भी वही दशा न हो। ६—गली।

आह वह जुरअते-फ़रियाद[१] कहाँ
दिल से तंग आके जिगर याद आया।

फिर तेरे कूचे को जाता है ख़याल
दिले-गुम गश्ता[२] मगर याद आया।

कोई वीरानी सी वीरानी है
दश्त[३] को देख के घर याद आया।

क्या ही रिज़वाँ[४] से लड़ाई होगी
घर तेरा .ख़ुल्द[५] में गर याद आया।

मैंने मजनूँ पै लड़कपन में 'असद'
संग[६] उठाया था कि सर याद आया।

(२५)

तू दोस्त किसी का भी सितमगर न हुआ था
औरों पै है वह .ज़ुल्म कि मुझ पर न हुआ था।

१—फ़रियाद करने की हिम्मत। दिल उसकी (प्रिय की) बदनामी के डर से फ़रियाद करने से डरता है इसलिये जिगर याद आ रहा है। २—खोया हुआ दिल। प्रिय को दिल का चोर नहीं कहना चाहते पर बात वही है कि तेरे कूचे का ख्याल आते ही अपना खोया हुआ दिल याद आ जाता है। ३—जंगल। ४—जन्नत का दारोग़ा। ५—स्वर्ग। ६—पत्थर। कहते हैं कि मैंने भी और लड़कों की तरह बचपन में मजनूँ पर पत्थर उठाया था, परन्तु फिर अपना सिर याद आ गया, क्योंकि मेरे सिर में भी प्रेम का पागलपन भरा था।

तौफ़ीक़[१] ब अन्दाज़ए-हिम्मत है अज़ल[२] से
आँखों में है वह क़तरा[३] कि गौहर[४] न हुआ था।

जब तक कि न देखा था क़दे-यार[५] का आलम
मैं मोतक़िदे फ़ितनए-महशर[६] न हुआ था।

(२६)

आईना देख अपना सा मुँह लेके रह गये
साहब को दिल न देने पै कितना .ग़ुरूर[७] था।

क़ासिद[८] को अपने हाथ से गर्दन न मारिये
इसकी ख़ता नहीं है ये मेरा .क़ुसूर था।

१—रुतबा। २—सृष्टि के आदि से। ३—बूँद। ४—मोती। प्रत्येक वस्तु अपनी हिम्मत के अनुसार स्थान पाती है। वही बूँद थी जो समुद्र में मोती बन गई और वही बूँद अपनी हिम्मत से आँख में आँसू बन कर जगह पा गई। आँखों में जगह पाना मुहावरा है जिसका अर्थ है बहुत प्रिय होना। ५—यार का क़द, शरीर। ६—क़यामत के फ़ितने (चंचलता) को मानने वाला। पहले केवल क़यामत (प्रलय) के शोर गुल-झगड़ों के बारे में सुना ही था, कभी विश्वास न किया था पर जब प्रिय का डील-डौल, उसकी चाल ढाल देखी तब मुझे क़यामत का भी विश्वास हो गया। ७—घमंड। इस शेर का मतलब है कि प्रिय को अपने सौंदर्य पर इतना अभिमान था कि किसी को अपने बराबर न समझता था। पर जब आईने में अपना प्रतिबिम्ब देखा तो अपने ही रूप पर मोहित हो गया और यह देखा कि मेरे बराबर दूसरा भी सुन्दर है, प्रिय का मुँह उतर गया। ८—पत्र वाहक।

(२७)

अर्ज़े-नियाज़े- इश्क़[1] के क़ाबिल नहीं रहा
जिस दिल पै मुझको नाज़ था वह दिल नहीं रहा।

मरने की ए दिल और ही तदबीर कर कि मैं
शायाने-दस्त-ओ-बाज़ुए-क़ातिल[2] नहीं रहा।

गो मैं रहा रहीने-सितमहाय-रोज़गार[3]
लेकिन तेरे ख़याल से ग़ाफ़िल नहीं रहा।

वेदादे-इश्क़[4] से नहीं डरता मगर 'असद'
जिस दिल पै नाज़ था मुझे वह दिल नहीं रहा।

(२८)

रश्क[5] कहता है कि उसका गैर से इख़लास[6] हैफ़[7]
अक़्ल कहती है कि वह बे मेह[8] किसका आशना[9]।

१--प्रेम की बात कहने। २--मुझे प्रिय इस योग्य नहीं समझता कि अपने हाथों से क़त्ल करे इस लिए ए दिल, अब अपने मरने की कोई और तरकीब सोच। ३--यद्यपि मैं सांसारिक कष्टों और कठिनाइयों में ही फंसा रहा पर तेरा ध्यान हर समय रहा। ४--प्रेम के कष्ट। इस शेर की दूसरी पंक्ति भी वही है जो पहले शेर की दूसरी पंक्ति है। इस शेर का भी वही मतलब है। अर्थात् अपने दिल के न रहने पर शोक प्रकट करते हैं। कहते कि मैं प्रेम में होने वाले कष्टों से नहीं डरता। लेकिन अफ़सोस कि वह दिल ही नहीं रहा जिसके कारण मैं हर कष्ट को सह लेता था। ५--ईर्ष्या। ६--सच्चा स्नेह। ७-अफ़सोस। ८-बेमुरव्वत। ९--दोस्त, प्रेमी। ईर्ष्या का कहना है कि वह औरों से प्रेम करता है और इसका उसे दुख है परन्तु बुद्धि का कहना है कि वह निष्ठुर प्रिय किसी से भी प्रेम नहीं करता इसलिये इसका दुख व्यर्थ है।

मैं और एक आफ़त का टुकड़ा वो दिले-वहशी कि है
आफ़ियत[1] का दुश्मन और आवारगी का आशना।

(२९)

ज़िक्र उस परीवश[2] का और फिर बयाँ अपना
बन गया रक़ीब[3] आख़िर था जो राज़दाँ[4] अपना।

मय वो क्यों बहुत पीते बज़्मे-ग़ैर में यारब
आज ही हुआ मंज़ूर उनको इम्तहाँ अपना।[5]

दे वो जिस क़दर ज़िल्लत[6] हम हँसी में टालेंगे
बारे आशना निकला उनका पासबाँ[7] अपना।

१--शान्ति मय जीवन। अब मेरा साथी हृदय ही रह गया है परन्तु वह भी एक ही आफ़त का टुकड़ा है जो शान्ति का दुश्मन है और इधर-उधर आवारा फिरना उसे बहुत पसन्द है। २--सुन्दरी। ३--प्रतिद्वन्दी। ४--भेदी, विश्वास पात्र। कहते हैं कि एक तो उस (प्रिय) जैसे सुन्दर की चर्चा और फिर मेरा जैसा वर्णन करने वाला। मैंने इस ढङ्ग से उसकी सुन्दरता का वर्णन किया कि मेरा भेदी भी उसका चाहने वाला (रक़ीब) बन गया। ५--यदि अपने शराब पीने का उन्हें इम्तहान ही लेना था तो उन्होंने दूसरे की सभा क्यों चुनी क्या मेरे घर में वे ख़ूब पीकर नहीं बहक सकते थे। मेरे घर ख़ूब पीते और बहकते तो अच्छा था। ६--अपमान। ७--पहरेदार, दरबान। कहते हैं कि वह हमें जितना भी अपमानित करेगा, हम हँसी में ही टालते जायँगे क्योंकि उनका दरबान अपना परिचित निकला।

दर्द-दिल लिखूँ कब तक, जाऊँ उनको दिखला दूँ
उँगलियाँ फ़िगार[1] अपनी,ख़ामा ख़ूँचकाँ[2] अपना ।
ता करे न ग़म्माज़ी,[3] कर लिया है दुश्मन को
दोस्त की शिकायत में, हमने हमज़बाँ[4] अपना ।
हम कहाँ के दाना[5] थे, किस हुनर में यकता[6] थे
बे सबब हुआ 'ग़ालिब' दुश्मन आस्माँ अपना ।

(३०)

सुर्मए-मुफ़्त-नज़र[7] हूँ मेरी क़ीमत यह है
कि रहे चश्मे-ख़रीदार[8] पै एहसां मेरा ।
रुख़सते नाला[9] मुझे दे कि मबादा[10] ज़ालिम
तेरे चेहरे से हो ज़ाहिर ग़मे-पिनहाँ[11] मेरा ।

---

१ फटी हुई । २—ख़ून टपकाती क़लम । कब तक पत्र द्वारा अपने दिल के दर्द का हाल लिखे जाऊँ, इस से अच्छा तो यही होगा कि जाकर अपनी अंगुलियाँ दिखला दूँ जो लिखते लिखते फट गई हैं और अपनी लेखनी भी, जिससे ख़ून टपकने लगा है । ३ भेद न खोल दे । ४—अपनी ही बात कहने वाला, स्वर में स्वर मिलाने वाला । ५ विद्वान । ६—विशेषज्ञ । आस्मान की दुश्मनी पर उर्दू कवियों ने बहुत ढग से लिखा है । कोई भी विपदा आये, उसमें उन्हें आस्मान का हाथ दिखाई पड़ता है । ग़ालिब भी कहते हैं कि हम न कोई विद्वान हैं न किसी कला के विशेषज्ञ हैं फिर आस्मान अकारण ही हमारा दुश्मन हो गया है । ७—निगाह के लिये मुफ़्त सुर्मा । ८ ख़रीदार की आँख । ९—रुदन । १०—कहीं । ११—गुप्त व्यथा । कहते हैं कि ए ज़ालिम ! मुझे रोने से मत रोक, कहीं ऐसा न हो कि मेरी गुप्त व्यथा का प्रभाव तेरे चेहरे पर भी पड़ जाय और इस प्रकार यह प्रकट हो जाय ।

(३१)

जौर[1] से बाज़ आए पर बाज़ आएँ क्या
कहते हैं हम तुझको मुँह दिखलाएँ क्या ।
रात दिन गर्दिश[2] में हैं सात आस्मां
हो रहेगा कुछ न कुछ घबराएँ क्या ।
लाग[3] हो तो उसको हम समझें लगाव
जब न हो कुछ भी तो धोका खाएँ क्या ।
हो लिये क्यों नामाबर[4] के साथ साथ
यारब ! अपने ख़त को हम पहुँचाएँ क्या ।
मौजे-ख़ूँ[5] सर से गुज़र ही क्यों न जाय
आस्ताने-यार[6] से उठ जायँ क्या ।

१—जफ़ा, अत्याचार । उसने जफ़ा करना छोड़ दिया पर अब पिछली जफ़ाओं के पश्चाताप के कारण कहता है कि हम मुँह क्या दिखाएँ । इसीलिये कहते हैं कि अपना सुन्दर मुखड़ा न दिखलाना भी तो एक अत्याचार ही है । अर्थात वह जफ़ाएँ करना छोड़कर भी जफ़ा किये जा रहा है । २—चक्कर । धैर्य और संतोष पर दृष्टि रख कर कहते हैं कि सातों आस्मान रात दिन चक्कर काट रहे हैं । कुछ न कुछ हमारे भले के लिये भी हो ही जायगा । इसलिये घबराएँ क्यों । ३—दुश्मनी । ४—पत्र वाहक । अर्थात पत्र वाहक के साथ हम व्यर्थ ही चले आये । क्या अपना पत्र हमें ही पहुँचाना होगा ? यदि हमें ही आना था तो पत्र वाहक की क्या ज़रूरत थी । ५—ख़ून की लहर । ६—यार की चौखट । अर्थात एक बार प्रेम करके उसे छोड़ना बड़े शर्म की बात है । अब तो चाहे ख़ून की नदी में ही नहाना पड़े, हम उसे (प्रिय को) न छोड़ेंगे ।

A/2844

उम्र भर देखा किया मरने की राह
मर गये पर देखिए दिखलाएँ क्या।[1]
पूछते हैं वह कि 'ग़ालिब' कौन है?
कोई बतलादो कि हम बतलाएँ क्या ?

(३२)

इशरते-क़तरा[2] है दरिया में फ़ना[3] हो जाना
दर्द का हद से गुज़रना है दवा हो जाना।
अब जफ़ा से भी हैं महरूम[4] हम अल्लाह अल्लाह
इस क़दर दुश्मने-अरबाबे-वफ़ा[5] हो जाना।
ज़ोफ़[6] से गिरिया[7] मुबद्दल[8] बदमे-सर्द हुआ
बावर[9] आया हमें पानी का हवा हो जाना।
है मुझे अब्रे-बहारी[10] का बरस कर खुलना
रोते-रोते ग़मे-फ़ुरक़त में फ़ना[11] हो जाना।

१—कहते हैं कि जीवन पर्यन्त तो उसने (प्रिय ने) ऐसा व्यवहार किया कि मरने की राह देखते रहे परन्तु अब मर गए हैं तब देखें और कौन सी मुसीबत लाता है। २—बूँद की ख़ुशी। ३—मिल जाना, लीन हो जाना। ४—वंचित। ५—वफ़ा करने वालों, प्रेमियों का दुश्मन। ६—निर्बलता। ७—रुदन। ८—परिवर्तित। ९—विश्वास। अर्थात दुर्बलता के कारण मेरा रोना ठंडी आहोंमें बदल गया और अब मुझे विश्वास हो गया कि पानी हवा में बदल जाता है। १०—वसन्त के बादल। ११—मिट जाना, मर जाना। कहते हैं कि जिस प्रकार बसन्त के बादल छाने पर अच्छे लगते हैं और जब बरस कर खुल जायें तब भी वातावरण बड़ा मनोहर लगता है इसी प्रकार मुझे तेरे वियोग में रोना भी अच्छा लगता है और रोते रोते मर जाऊँ तो यह भी मेरे लिए आनन्द की बात होगी।

(३३)

मुँद गईं खोलते ही खोलते आँखें 'ग़ालिब'
यार लाए मेरी बालीं[1] पै उसे पर किस वक़्त।

(३४)

हुस्न ग़मज़ा[2] की कशाकश[3] से छुटा मेरे बाद
बारे आराम से हैं अहले-जफ़ा[4] मेरे बाद।
शमअ बुझती है तो उसमें से धुआँ उठता है
शोलए-इश्क़ सियह पोश हुआ मेरे बाद।[5]
कौन होता है हरीफ़े-मए-मर्द अफ़गने इश्क़[6]
है मुकर्रर लबे-साक़ी पै सला मेरे बाद।

१—सिरहाने। २—नाज़ व अदा। ३—प्रयासों। ४—जफ़ा करने वालों। अर्थात् मैं जब तक जीवित था तब तक हर एक हसीन मुझे लुभाने के लिए नाज़ नखरे का अभ्यास करता रहता था, पर मेरी मृत्यु के बाद उन्हें इन झंझटों से छुटकारा मिल गया। अब वे जफ़ा करने वाले आराम से हैं। ५—सियह पोश के माने हैं काले कपड़े पहनना और काले कपड़े किसी शोक का लक्षण माने जाते हैं। कहते हैं कि प्रेम की लपट भी अब शमा से बिछुड़ने पर शोक का रूप धारण करने लगी है, क्योंकि शमा बुझने पर जो धुआँ उठता है वह भी एक शोला होता है। ६—हरीफ़ साथी को भी कहते हैं और प्रतिद्वन्दी को भी। मए-मर्द-अफ़गने-इश्क़, अर्थात् इश्क़ की शराब जो मर्द को गिरा देती है। मुकर्रर का अर्थ है दो बार और सला आवाज़ा देने को कहते हैं। यानी साक़ी दो दो आवाज़ लगाता है कि कोई है जो प्रेम की उस मदिरा का पान करे जो पुरुष को अपने तीव्र नशे से गिरा देती है। मतलब साफ़ है कि मैं नहीं रहा अतः साक़ी को बार बार ललकारना पड़ता है पर कोई सामने नहीं आता।

ग़म से मरता हूँ कि इतना नहीं दुनिया में कोई
कि करे ताज़ियते-मेह्र-ओ-वफ़ा[१] मेरे बाद।
आये है बेकसिये इश्क़ पै रोना 'ग़ालिब'
किसके घर जायगा सैलाबे-बला[२] मेरे बाद।

(३५

घर जब बना लिया तेरे दर[३] पर कहे बग़ैर
जानेगा अब भी तू न मेरा घर कहे बग़ैर।
कहते हैं जब रही न मुझे ताक़ते-सुख़न[४]
जानूँ किसी के दिल की मैं क्योंकर कहे बग़ैर।
काम उससे आ पड़ा है कि जिसका जहान में
लेवे न कोई नाम सितमगर कहे बग़ैर।
जी में ही कुछ नहीं है हमारे वगर[५] न हम
सर जाय या रहे न रहें पर कहे बग़ैर।
छोड़ूँगा मैं न उस बुते-काफ़िर का पूजना
छोड़े न ख़ल्क़[६] गो मुझे काफ़िर कहे बग़ैर।

१—ताज़ियत = मातम, मेह्र-ओ-वफ़ा = प्रेम और वफ़ादारी।

२—विपदाओं की बाढ़। प्रेम को ही यहां सैलाबे-बला कहा है। कहते हैं प्रेम की विवशता पर रोना आता है क्योंकि मेरे बाद बेचारा किसके घर जायगा। ३—द्वार। मतलब यह है कि मैंने अब तेरे दरवाज़े पर ही अपना घर बना लिया है। पहले तू यह बहाना करता था कि मेरा घर नहीं जानता। अब क्या बहाना करेगा जब कि तुझे अपने घर में भी मेरे घर के सामने से होकर जाना पड़ेगा। ४—बोलने की शक्ति। जब मैं इतना दुर्बल होगया कि बोल नहीं पाता तब कहते हैं कि बिना तुम्हारे कहे मैं तुम्हारे मन की बात कैसे जान सकता हूँ। ५—वरना, वरन्। ६—सर्व साधारण।

मक़सद है नाज़-ओ-ग़मज़ा वले गुफ़्तगू में काम ❀
चलता नहीं है दशना-ओ-ख़ञ्जर कहे बग़ैर।
हर चन्द हो मुशाहिदए-हक़[१] की गुफ़्तगू
बनती नहीं है बादा-ओ-साग़र[२] कहे बग़ैर।
बहरा हूँ मैं तो चाहिये दूना हो इलतफ़ात[३]
सुनता नहीं हूँ बात मुकर्रर कहे बग़ैर।
'ग़ालिब' न कर हुज़ूर[४] में तू बार बार अर्ज़
ज़ाहिर है तेरा हाल सब उन पर कहे बग़ैर।

(३६)

क्यों जल गया न ताबे-रुख़े-यार[५] देखकर
जलता हूँ अपनी ताक़ते-दीदार[६] देखकर।

❀ कहते हैं कि हमारा मतलब तो है प्रिय के नाज़ अन्दाज़ से, किन्तु बातचीत में लोगों को समझाने के लिये उन्हें दशना (छोटा खञ्जर) और ख़ञ्जर कहना पड़ता है। क्योंकि उसके नाज़ अन्दाज़ भी कुछ कम तीखे या प्राण घातक नहीं होते। १—ज्ञान ध्यान की बातें। २—शराब और प्याले। सूफ़ी शायर भी अपनी शायरी में शराब और प्याले की उपमा देते हैं। उसी ओर इस शेर में भी संकेत हैं। ३—स्नेह, कृपा। ग़ालिब भी आख़िरी उम्र में कम सुनने लगे थे, इस शेर में इस बात का भी उल्लेख है। कहते हैं कि मैं बहरा हूँ इस लिये दो बार कोई बात कहने से सुनता हूँ, अतः मुझ पर तेरी कृपा और स्नेह औरों की उपेक्षा दूना होना चाहिए। ४—हुज़ूर से यहाँ मतलब है बादशाह बहादुर शाह से जो स्वयं कवि थे और कवियों की क़द्र करते थे। ५—प्रिय के मुखड़े की ज्योति। ६—देखने की शक्ति। कहते हैं यदि प्रिय का सुन्दर मुखड़ा देख कर ही जल गया होता तो कितने गर्व की बात होती। परन्तु उसके ज्योतिर्मय मुखड़े को देख कर तो जला नहीं, अब अपने देखने की शक्ति देख इस दुख की आग में जल रहा हूँ कि क्यों न पहले ही जल गया।

आतिश परस्त[१] कहते हैं अहले-जहाँ[२] मुझे
सरगर्मे-नालाहाय शरर-बार[३] देखकर।
वाह सरता[४] कि यार ने खींचा सितम से हाथ
हमको हरीसे-लज़्ज़ते-आज़ार[५] देख कर।
विक जाते हैं हम आप मताए-सुख़न[६] के साथ
लेकिन अयार[७] तबए-ख़रीदार[८] देख कर।
ज़ुन्नार[९] बाँध सबहए सद दाना[१०] तोड़ डाल
रह रौ[११] चले हैं राह को हमवार[१२] देख कर।
इन आबलों से पाँव के घबरा गया था मैं
जी ख़ुश हुआ है राह के पुरख़ार[१३] देखकर।
गिरनी थी हम पै बर्क़े तजल्ली[१४] न तूर[१५] पर
देते हैं बादा[१६] ज़र्फ़-क़दह ख़्वार[१७] देख कर।

१—अग्निपूजक। २—दुनिया वाले। ३—आग बरसाने वाले रुदन में तल्लीन। ४—अफ़सोस। ५—दुख के स्वाद का लोभी। ६—सुख़न (कविता) के धन। ७ कसौटी। ८—ग्राहक की रुचि। कहते हैं कि हम शायरी के क़दरदानों के स्वयं ग़ुलाम बन जाते हैं लेकिन उनकी रुचि की कसौटी को पहले जाँच लेते हैं। बिक जाना मुहावरा है जिसके मानी हैं ग़ुलाम बन जाना। ९—जनेऊ। १० सौ दानों वाली माला। ११—पथिक। १२—समतल। १३—काँटों से भरा। १४—दैवी ज्योति की बिजली। १५—एक पहाड़ जिस पर मूसा को ईश्वर के दर्शन हुए। १६—शराब। १७—शराब पीने वाले का प्याला। मूसा को ईश्वर ने दर्शन देना चाहे पर मूसा उसकी चमक ही देख कर मूर्छित हो गये थे। ग़ालिब कहते हैं कि उस दैवी ज्योति को तूर पहाड़ की जगह हम जैसे प्रेमी पर बिजली बन कर गिरना था क्योंकि हम बेहोश न होते। शराबी का प्याला देख कर ही उसे शराब देनी चाहिये। मतलब यह है कि ईश्वर ने अपने दर्शन देने के लिए मूसा की जगह हमें क्यों न चुना।

सर फोड़ना वो 'ग़ालिबे'-शोरीदा-हाल[१] का
याद आ गया मुझे तेरी दीवार देख कर।

(३७)

है बस कि हर एक उनके इशारे में निशाँ और
करते हैं मुहब्बत तो गुज़रता है गुमाँ[२] और।
यारब वो न समझे हैं न समझेंगे मेरी बात
दे और दिल उनको जो न दे मुझको ज़बां और।
हर चन्द सुबुक दस्त हुए बुत-शिकनी[३] में
हम हैं तो अभी राह में हैं संगे-गरां और।
लोगों को है ख़ुरशीदे-जहाँ ताब[४] का धोका
हर रोज़ दिखाता हूँ मैं एक दाग़े निहां[५] और।
पाते नहीं जब राह तो चढ़ जाते हैं नाले
रुकती है मेरी तबअ[६] तो होती है रवाँ[७] और।
हैं और भी दुनिया में सुख़नवर[८] बहुत अच्छे
कहते हैं कि 'ग़ालिब' का है अन्दाज़े-बयां[९] और।

१—परेशान हालत वाला, पागल। २—संदेह। उसके (प्रिय के) प्रत्येक संकेत में एक नवीनता और नया अर्थ होता है अतः जब वह प्रेम करता है तब भी मुझे कुछ और सन्देह होता है। ३—हमने बहुत से कठिनाइयों के बुत तोड़े परन्तु यह न समझो कि कठिनाइयों का अन्त हो गया है। हम जीवित हैं तो मार्ग में बहुत से भारी पत्थर आजायँगे। ४—सूर्य जो संसार को जगमगाता है। ५—गुप्त दाग़। ६—तबिअत। ७—प्रवाहित। ८—कवि। ९—कहने का ढङ्ग, वर्णन शैली।

(३८)

'असद' बिस्मिल है किस अन्दाज़ का क़ातिल से कहता था
कि मश्क़े-नाज़ कर .खूने-दो-आलम मेरी गर्दन पर । ❀

(३९)

लाज़िम था कि देखो मेरा रस्ता कोई दिन और
तनहा गये क्यों, अब रहो तनहा कोई दिन और।[१]
मिट जायगा सर गर तेरा पत्थर न घिसेगा
हूँ दर पै तेरे नासिया फ़रसा[२] कोई दिन और।
आए हो कल और आज ही कहते हो कि जाऊँ
माना कि हमेशा नहीं, अच्छा कोई दिन और।
जाते हुए कहते हो क़यामत को मिलेंगे
क्या .खूब, क़यामत का है गोया कोई दिन और।

---

*अर्थात घायल हो जाने पर भी प्रिय से कहता है कि मैंने न केवल अपना खून माफ़ किया बल्कि तू अपने नाज़ की मश्क़ (अभ्यास) किये जा, मैं दो आलम (लोक पर लोक) का खून भी अपनी गर्दन पर लेलूँगा। तुझसे कोई न पूछेगा।

१—यह ग़ज़ल वास्तव में मर्सिया है, जो मिर्ज़ा ग़ालिब ने नवाब ज़ैनुल आबिदीन खाँ 'आरिफ़' की मृत्यु पर लिखी है। 'आरिफ़' मिर्ज़ा ग़ालिब की बहन के बेटे थे। ग़ालिब के कोई संतान न थी इस लिये ग़ालिब उन्हें बेटे की तरह मानते थे। आरिफ़ अच्छे शायर भी थे इस कारण मिर्ज़ा ग़ालिब को उनकी जवान मौत का और भी अधिक दुख हुआ। इस ग़ज़ल के एक एक शब्द में ग़ालिब ने अपने हृदय की वेदना को भर दिया है।

२—सिर झुकाता। इस शेर में 'हूँ दर पै तेरे' से शायर का मतलब है क़ब्र से। क़ब्र के पत्थर का ज़िक्र पहले ही आ चुका है। कहते हैं तेरी क़ब्र का पत्थर न घिसा तो सिर तो घिस ही जायगा।

हाँ, ए फ़लके-पीर[१] जवाँ था अभी 'आरिफ़'
क्या तेरा बिगड़ता जो न मरता कोई दिन और।
तुम माहे-शबे चार दहम[२] थे मेरे घर के
फिर क्यों न रहा घर का वो नक़्शा कोई दिन और।
तुम कौन से थे ऐसे खरे दाद-ओ-सतद[३] के
करता मलकुलमौत[४] तक़ाज़ा कोई दिन और।
मुझसे तुम्हें नफ़रत सही 'नय्यर'[५] से लड़ाई
बच्चों का भी देखा न तमाशा कोई दिन और।
गुज़री न बहर हाल ये मुद्दत .खुश-ओ-ना.खुश
करना था जवाँ मर्ग गुज़ारा कोई दिन और।[६]
नादां हो जो कहते हो कि क्यों जीते हो 'ग़ालिब'
क़िस्मत में है मरने की तमन्ना कोई दिन और। [७]

(४०)

आह को चाहिये एक उम्र असर होने तक
कौन जीता है तेरी .ज़ुल्फ के सर[८] होने तक।

१—बूढ़ा आस्मान। २—चौदहवीं रात के चाँद। ३—लेन देन। ४—यमदूत। ५—नवाब ज़ियाउद्दीन अहमद खाँ 'नय्यर' (जिनका दूसरा तखल्लुस 'रख्शाँ' था) रियासत लोहारू के रईस थे और वे भी आरिफ़ को बहुत मानते थे। ६—'गुज़री न' का यहाँ अर्थ है 'गुज़र ही तो गई' कहते हैं इतने दिन तो सुख या दुख में जीवन बिता दिया, ऐ जवानी में मरने वाले! कुछ दिन और भी इसी प्रकार जीवन बिताना था। ७—तुम नादान और ना समझ हो जो पूछते हो कि ग़ालिब क्यों जी रहे हो। मैं क्या करूँ, अभी मेरे भाग्य में कुछ दिन और मरने की तमन्ना करते रहना लिखा है इसलिये मरूँ तो कैसे मरूँ। ८—ज़ुल्फ़ के सुलझने।

MODERN COLLEGE POONA

आशिक़ी सब्र-तलब और तमन्ना बेताब
दिल का क्या रंग[1] करूँ .खूने-जिगर होने तक।

हमने माना कि तग़ा.फुल[2] न करोगे लेकिन
ख़ाक हो जाएँगे हम तुमको ख़बर होने तक।

ग़मे-हस्ती[3] का 'असद' किस से हो जुज़ मर्ग[4] इलाज
शमअ हर रङ्ग में जलती है सहर[5] होने तक।

(४१)

मुझको दयारे-ग़ैर[6] में मारा वतन से दूर
रख ली मेरे .खुदा ने मेरी बेकसी की शर्म।

(४२)

वह फ़िराक़ और वह विसाल कहां
वह शब-ओ-रोज़ ओ माह-ओ-साल[7] कहां।

.फुरसते कारो-बारे-ओ-शौक़ किसे
ज़ौक़े-नज़्ज़ारए-जमाल[8] कहां।

दिल तो दिल वह दिमाग़ भी न रहा
शोरे-सौदाए-ख़त-ओ-ख़ाल कहां।[9]

१—सँभालूँ। २—भूलना, उपेक्षा करना, बेपरवाही करना। ३—जीवन के दुख। ४—मृत्यु के सिवा। ५—सुबह। ६—परदेश। ७—रात-दिन, महीना-वर्ष। ८—रूप के दर्शन की रुचि। ९—सौदा दिमाग़ में होता है। ग़ालिब कहते हैं कि दिल की बात तो छोड़ो, अब वह दिमाग़ भी नहीं रहा जिस में किसी के ख़त-ओ-ख़ाल (नख शिख) देख कर प्रेम का पागलपन पैदा होता था।

थी वो एक शख़्स के तसव्वुर[1] से
अब वो रअनाइये-ख़याल[2] कहां।

ऐसा आसाँ नहीं लहू रोना
दिल में ताक़त जिगर में हाल[3] कहां।

हमसे छूटा क़मार ख़ानए-इश्क़[4]
वाँ जो जाएँ गिरह में माल कहाँ।

फ़िक्रे-दुनिया में सर खपाता हूँ
मैं कहाँ और यह वबाल कहाँ।

मुज़महिल[5] हो गए क़वा[6] 'ग़ालिब'
अब अनासिर[7] में एतदाल[8] कहाँ।

(४३)

की वफ़ा हम से तो ग़ैर उसको जफ़ा कहते हैं
होती आई है कि अच्छों को बुरा कहते हैं।

आज हम अपनी परेशानिये-ख़ातिर उनसे
कहने जाते तो हैं पर देखिये क्या कहते हैं।

अगले वक़्तों के हैं ये लोग इन्हें कुछ न कहो
जो मय-ओ-नग़मा को अन्दोह-रुबा[9] कहते हैं।

१—कल्पना। २—विचारों की सुन्दरता। ३—हालत, अर्थात अब जिगर की भी यह हालत नहीं है। ४—प्रेम का जुआ खाना। ५—शिथिल। ६—अंग, इन्द्रियाँ। ७—अनासिर पंचभूत को कहते हैं, यहाँ कवि का मतलब शारीरिक स्वास्थ्य से है। ८—संतुलन। ९—दर्द दुख दूर करने वाली।

दिल में आजाए है होती है जो .फ़ुरसत ग़श से
और फिर कौन से नाले को रसा कहते हैं। *

(४४)

मेहबाँ होके बुला लो मुझे चाहो जिस वक़्त
मैं गया वक़्त नहीं हूँ कि फिर आभी न सकूँ।
ज़ोफ़[1] में ताअनए-अग़्यार[2] का शिकवा क्या है
बात कुछ सर तो नहीं है कि उठा भी न सकूँ।
ज़ह मिलता ही नहीं मुझको सितमगर वरना
क्या क़सम है तेरे मिलने की कि खा भी न सकूँ।

(४५)

हम से खुल जाओ ब वक़्ते-मयपरस्ती[3] एक दिन
वरना हम छेड़ेंगे रखकर उज़्रे-मस्ती[4] एक दिन।
क़र्ज़ की पीते थे मय लेकिन समझते थे कि हाँ
रंग लाएगी हमारी फ़ाक़ामस्ती एक दिन।
नग़माहाए-दिल को भी ए दिल ग़नीमत जानिये
बे सदा हो जायगा यह साज़े-हस्ती एक दिन।
धौल धप्पा उस सरापा नाज़ का शेवा[5] नहीं
हम ही कर बैठे थे 'ग़ालिब' पेश दस्ती[6] एक दिन।

*'दिल में आजाय है' से यहाँ कवि का मतलब है प्रिय के मन में आजाने से। अर्थात मुझे ग़श (मूर्छा) से जब फ़ुरसत मिलती है तब प्रिय मेरे हृदय में आता है। इससे स्पष्ट है कि मेरे नाले (रुदन) की पहुँच उस तक हो जाती है नहीं तो वह हृदय में भी न आता।

१- दुर्बलता। २—ग़ैरों के व्यंग बाण। ३—शराब पीते समय। ४—मस्ती का बहाना करके। ५- आदत। ६—छेड़खानी, पहल।

(४६)

मानए-दश्त नवर्दी[1] कोई तदबीर नहीं
एक चक्कर है मेरे पाँव में ज़ंजीर नहीं
हज़रते-लज़्ज़ते-आज़ार[2] रही जाती है
जादए-राहे-वफ़ा[3] जुज़ दमे-शमशीर[4] नहीं।
सर खुजाता है जहाँ ज़ख़्मे-सर अच्छा हो जाय
लज़्ज़ते-संग[5] ब अन्दाज़ए-तक़रीर[6] नहीं।
'ग़ालिब' अपना ये अक़ीदा[7] है बक़ौले-'नासिख़'
आप बेबहरा[8] है जो मोतक़िदे-'मीर'[9] नहीं।

(४७)

बरशगाले-गिरियए-आशिक़[10] है देखा चाहिये
खुल गई मानिन्दे-गुल सौ जा[11] से दीवारे-चमन।
उलफ़ते-गुल से ग़लत है दावए-वारस्तगी[12]
सर्व है बावस्फ़े-आज़ादी[13] गिरफ़्तारे चमन।

(४८)

जहाँ तेरा नक़्शे क़दम[14] देखते हैं
ख़याबाँ[15] ख़याबाँ एरम[16] देखते हैं।

१—जंगल में घूमने से रोकने वाली। २—दुख के स्वाद की हसरत। ३—वफ़ा का मार्ग। ४—तलवार की धार। ५—पत्थर खाने का स्वाद। ६—अकथनीय। ७—विश्वास। ८—अज्ञानी। ९—मीर का भक्त। मीर तक़ी 'मीर' उर्दू के बहुत बड़े कवि हुए हैं। १०—प्रेमी के रुदन से बरसात। ११—जगह। १२—रिहाई। १३—आज़ादी के बावजूद। सर्व या सरो के वृक्ष को सर्व-आज़ाद कहा जाता है। इसीलिये 'ग़ालिब' कहते हैं कि वह आज़ाद होने पर भी फूलों के प्रेम में चमन का बंदी है। १४—पदचिह्न। १५—क्यारी या वाटिका। १६—स्वर्ग।

बना कर फ़क़ीरों का हम भेस 'ग़ालिब'
तमाशाए - अहले - करम[1] देखते हैं ।

(४६)

ताफिर[2] न इन्तज़ार में नींद आए उम्र भर
आने का वादा कर गये आये जो ख्वाब में ।

क़ासिद के आते-आते ख़त एक और लिख रखूँ
मैं जानता हूँ जो वो लिखेंगे जवाब में ।

मुझ तक कब उनकी बज़्म में आता था दौरे-जाम
साक़ी ने कुछ मिला न दिया हो शराब में ।

जो मुनकिरे-वफ़ा[3] हो फ़रेब उस पै क्या चले
क्यों बदगुमां हूँ दोस्त से दुश्मन के बाब[4] में ।

मैं मुज़्तरिब[5] हूँ वस्ल में ख़ौफ़े-रक़ीब से
डाला है तुम को वह्म ने किस पेच-ओ-ताब में ।

मैं और हज़्ज़े-वस्ल[6] ख़ुदा साज़[7] बात है
जाँ नज़्र देनी भूल गया इज़्तराब में

१—दानी । २—ताकि, फिर । ३—वफ़ा से इनकार करने वाला । ४—बारे में । कहते हैं कि प्रिय तो जानता ही नहीं कि प्रीत निभाना किसे कहते हैं इस लिये उसको कोई धोखा नहीं दे सकता । अतएव मुझे दुश्मन की ओर से निश्चिन्त रहना चाहिये, क्योंकि वह भी उसे चकमा नहीं दे सकता । ५—बेचैन । इन पंक्तियों का अर्थ है कि मैं तो मिलन के समय रक़ीब के डर से घबरा रहा हूँ कि वह रंग में भंग न कर दे । पर तुम को किस सन्देह ने परेशानी में डाल रक्खा है । ६—मिलन का आनन्द । ७—ख़ुदा की ओर से । अर्थात मैं तुम से मिलने का आनन्द लेने के योग्य कहाँ । मुझे तो इस ख़ुशी में मर जाना चाहिये था । पर मैं ऐसा घबरा गया कि तुम्हें अपने प्राणों की भेंट देना भी भूल गया ।

लाखों लगाव एक चुराना निगाह का
लाखों बनाव एक बिगड़ना अताब में । ❀

वह नाला दिल में ख़स[1] के बराबर जगह न पाय
जिस नाला से शिगाफ़[2] पड़े आफ़ताब[3] में ।

'ग़ालिब' छुटी शराब पर अब भी कभी कभी
पीता हूँ रोज़े-अब्र[4] -ओ-शबे-माहताब[5] में ।

(५०)

हैराँ हूँ दिल को रोऊँ कि पीटूँ जिगर को मैं
मक़दूर[6] हो तो साथ रखूँ नौहागर[7] को मैं ।

छोड़ा न रश्क[8] ने कि तेरे घर का नाम लूँ
हर एक से पूछता हूँ कि जाऊँ किधर को मैं ।

❀लगाव से मतलब है प्रेम । बनाव = बनाव सिंगार । एताब = क्रोध । कहते हैं कि प्रिय की लाखों लगावटें एक तरफ़ और निगाह चुराना एक तरफ़ । क्योंकि शर्म से नज़र चुराना भी प्रेम ही के कारण होता है; और उसकी यह अदा बड़ी प्यारी होती है (इसी प्रकार लाखों बनाव सिंगार से प्रिय का रूप जितना निखर उठता है उस से कहीं अधिक सुन्दर वह तब लगता है जब वह ग़ुस्से में बिगड़ जाय ।

१—तिनके । २—दराड़ । ३—सूर्य । ४—जब बादल छाये हों वह दिन । ५—चाँदनी रात । ६—सामर्थ्य । ७—मातम करने वाला । कहते हैं कि मैं अकेले दोनों (दिल और जिगर) का मातम कैसे करूँ, क्योंकि दोनों समान रूप से प्रिय हैं । सामर्थ्य हो तो एक मातम करने वाले को नौकर रख लूँ । मैं दिल को रोऊँ और वह जिगर को रोये । ८—ईर्ष्या । ईर्ष्या वश इस लिये तेरे घर का नाम नहीं लेता कि औरों को भी तेरे ठिकाने का पता चल जायगा ।

जाना इधा रक़ीब के दर पर हज़ार बार
ए काश जानता न तेरी रह गुज़र[1] को मैं।
लो वह भी कहते हैं कि ये बे नंग-ओ-नाम[2] है
यह जानता अगर तो लुटाता न घर को मैं।
चलता हूँ थोड़ी दूर हर एक तेज़ रौ[3] के साथ
पहचानता नहीं हूं अभी राहबर[4] को मैं।
ख्वाहिश को अहमक़ों ने परस्तिश[5] दिया क़रार
क्या पूजता हूँ उस बुते-बेदादगर को मैं।
फिर बे.ख़ुदी में भूल गया राहे-कूए-यार
जाता वगर न एक दिन अपनी ख़बर[6] को मैं।

(५१)

दोनों जहान देके वो समझे कि .ख़ुश रहा
याँ आ पड़ी ये शर्म की तकरार क्या करें।
थक थक के हर मुक़ाम पै दो चार रह गए
तेरा पता न पाएँ तो नाचार क्या करें।
क्या शमअ के नहीं हैं हवा ख्वाह अहले-बज़्म
हो ग़म ही जाँगुदाज़ तो ग़मख्वार क्या करें।*

१—रास्ता, गली। तुझे रक़ीब के घर जाते देख मैं समझा यही तेरे घर का रास्ता है, इस कारण हज़ार बार तुझे खोजने निकला पर हर बार रक़ीब के घर पहुँच गया। काश, मैंने तुझे इस रास्ते जाते न देखा होता। २—जिसका न घर द्वार हो न पता ठिकाना। ३—तीव्र गामी। ४—पथप्रदर्शक। ५—पूजा। ६—अपने आपको।

* शअम के शुभचिन्तक महफ़िल में नहीं हैं, ऐसा बात नहीं है, पर उसका दुख ही जान को जलाने वाला है इसलिये वे क्या कर सकते हैं। शमअ और उसके दुख की आड़ में कवि अपने दुख की बात कह रहा है और अपने मित्रों की विवशता की ओर संकेत कर रह है।

(५२)

ये हम जो हिज्र में दीवार-ओ-दर को देखते हैं
कभी सबा को कभी नामाबर को देखते हैं।
वो आएँ घर में हमारे .ख़ुदा की .क़ुदरत है
कभी हम उनको कभी अपने घर को देखते हैं।
नज़र लगे न कहीं उसके दस्त-ओ-बा.ज़ू को
ये लोग क्यों मेरे ज़ख्मे-जिगर को देखते हैं।*

(५३)

जो आऊँ सामने उनके तो मरहबा[1] न कहें
जो जाऊँ वाँ से कहीं को तो ख़ैरबाद[2] नहीं।
कभी जो याद भी आता हूँ मैं तो कहते हैं
कि आज बज़्म में कुछ फ़ितना-ओ-फ़साद[3] नहीं।
अलावा ईद के मिलती है और दिन भी शराब
गदाए-कूचए-मैख़ाना नामुराद नहीं।
जहाँ में हो ग़म-ओ-शादी बहम[4] हमें क्या काम
दिया है हमको .ख़ुदा ने वो दिल कि शाद नहीं।
तुम उनके वादे का ज़िक्र उनसे क्यों करो 'ग़ालिब'
ये क्या कि तुम कहो और वो कहें कि याद नहीं।

---

* अपने जिगर के घाव देखने वालों को देख कर प्रेमी के मन में यह आशंका उठ रही है कि कहीं इनकी नज़र प्रिय के हाथ और बाहों को न लग जाय, क्योंकि जिगर में उसने ही घाव किया है।

१—स्वागत के लिये प्रेम सूचक शब्द। २—विदा के समय कहा जाने वाला शब्द। ३—लड़ाई झगड़ा। ४—दुख सुख साथ साथ।

(५४)

तेरे तौसन[1] को सबा[2] बाँधते हैं
हम भी मज़मूँ की हवा[3] बाँधते हैं।

आह का किसने असर देखा है
हम भी एक अपनी हवा बांधते हैं।

तेरी .फ़ुरसत के मुक़ाबिल ए उम्र
बर्क़ को पा ब-हिना बाँधते हैं ।※

ग़लती हाय मज़ामीं मत पूछ
लोग नाले को रसा बांधते हैं ।+

१—घोड़ा। २—हवा। ३—रोब जमाना। हवा बाँधना मुहाविरा है जिसका अर्थ है शेख़ी मारना, रोब जमाना। इस शेर में व्यंग भी है और अतिशयोक्ति भी। कहते हैं कि तेरे घोड़े को हम हवा की तरह तीव्रगामी मानते हैं, इसलिये उसे सबा (हवा) कह रहे हैं। यद्यपि वह हवा से भी तेज़ चलता है। हवा कह कर तो हमने मज़मून की हवा बाधी है।

※ज़िन्दगी को दो दिन, चार दिन की ज़िन्दगी कह कर उसकी निस्सारता की ओर संकेत किया जाता है। ग़ालिब ने जीवन को इतना अल्प बताया है कि बिजली की चाल को भी कहते हैं कि उसके पाँव में मानो मेंहदी लगी हो। अर्थात मनुष्य की आयु उस से भी कम है जितनी बिजली की चाल।

† मज़ामीन अर्थात मज़मूनों की ग़लतियाँ न पूछो। लोग नाले (रुदन) को रसा अर्थात पहुँचा हुआ कह देते हैं। यदि रुदन की पहुँच होती तो हमारे रुदन में भी कुछ असर होता।

सादा पुरकार हैं ख़ूबां 'ग़ालिब'
हमसे पैमाने-वफ़ा बांधते हैं।*

(५५)

दायम[1] पड़ा हुआ तेरे दर पर नहीं हूँ मैं
ख़ाक ऐसी ज़िन्दगी पै कि पत्थर नहीं हूँ मैं।
क्यों गर्दिशे-मुदाम[2] से घबरा न जाय दिल
इन्सान हूँ पियाला-ओ-साग़र नहीं हूँ मैं।
यारब ज़माना मुझको मिटाता है किसलिये
लौहे-जहाँ पै[3] हर्फ़े मुकर्रर नहीं हूँ मैं।

---

* सादा अर्थात सरल हृदय या अनुभव हीन। पुरकारा अर्थात चालाक, ऐयार। इस शेर का स्वर भी व्यंगात्मक है। कहते हैं कि ये हसीन हम से कहते हैं कि वफ़ा करेंगे, मानो हम जानते ही नहीं कि ये कैसे छली होते हैं।

१—सदा, हमेशा। कहते हैं कि मैं यदि पत्थर होता और तेरे दर (द्वार) पर होता तो दिन में बीसों बार तेरे चरण ही चूमने को मिलते। परन्तु धिक्कार है इस जीवन पर कि मैं पत्थर भी नहीं बना। इसका एक मतलब यह भी है कि तुझसे दूर रहना मानो बिलकुल निर्जीव और निश्चेष्ट जीवन बिताना है। यद्यपि मैं पत्थर नहीं हूँ फिर भी उसके द्वार तक नहीं पहुँच सकता। धिक्कार है ऐसे जीवन पर !

२—लगातार चक्करों। शराब के प्याले और साग़र का तो काम ही है चक्कर में रहना। पर मैं तो इन्सान हूँ, इसलिये इस हमेशा के चक्कर से मेरा मन क्यों न घबरा जाय।

३—लौह अरबी में उस तख़्ती को या पत्थर को कहते हैं जिस पर कुछ लिखा जाय। ग़ालिब कहते हैं कि मैं दुनिया की तख़्ती पर दोहराकर लिखा हुआ अक्षर (हर्फ़े-मुकर्रर) नहीं हूँ, फिर ज़माना मुझे क्यों मिटाता है। (तख़्ती पर कोई अक्षर दो बार लिख जाय तो दूसरे अक्षर को मिटा देते हैं)

MODERN COLLEGE POONA 5.

(५६)

सब कहाँ, कुछ लाला-ओ-गुल में नुमायाँ हो गईं
ख़ाक में क्या सूरतें होंगी कि पिनहाँ हो गईं ।[1]
याद थीं हमको भी रङ्गारङ्ग बज़्म आराइयाँ
लेकिन अब नक़्श-ओ-निगारे-ताके निसियाँ हो गईं ।[2]
जूए-.ख़ूँ आँखों से बहने दो कि है शामे-फ़िराक़
मैं ये समझूँगा कि दो शमएँ फ़रोज़ाँ हो गईं ।[3]
इन परीज़ादों से लेंगे .ख़ुल्द में हम इन्तक़ाम
.क़ुदरते-हक़ से यही हूरें अगर वाँ हो गईं ।[4]
नींद उसकी है, दिमाग़ उसका है, रातें उसकी हैं
तेरी .ज़ुल्फ़ें जिसके बाज़ू पर परेशाँ हो गईं ।

१—सब कहाँ अर्थात सब नहीं कुछ थोड़ी ही सी शक्लें फूलों के रूप में प्रकट हो गईं, इस से अनुमान कीजिये कि कैसे कैसे रूपवान इस मिट्टी में छिप गये होंगे जिनकी सुन्दरता के प्रतीक ये फूल हैं।

२—हमको भी राग रंग की महफ़िलों की कहानियाँ याद थीं अर्थात हम भी आनन्द और सुख भोग चुके हैं। परन्तु अब वे ताक़े-निसियाँ (जिस ताक़ पर कुछ रख कर भूल जाया जायं) की शोभा बन चुकी हैं। यानी अब हम सब कुछ भूल चुके हैं।

३—जूए-ख़ूँ अर्थात ख़ून की नदी को आँखों से बहने दो। मैं समझूँगा कि जुदाई की शाम में दो दीप जल गये हैं जिनसे जुदाई की शाम की अंधियारी दूर हो जायगी ।

४—परीज़ादों अर्थात परियों की लड़कियाँ (सुन्दरियाँ) यदि स्वर्ग में हूरें बन गईं तो इन्होंने हमें जितना दुनिया में सताया है इस सब का बदला लेलेंगे। क्योंकि हूरों के बारे में माना जाता है कि वे स्वर्ग वासियों को दासी के रूप में मिलेंगी।

मैं चमन में क्या गया गोया दबिस्ताँ[1] खुल गया
बुलबुलें सुनकर मेरे नाले ग़ज़ल ख़्वाँ हो गईं ।
रंज से .ख़ूगर[2] हुआ इन्साँ तो मिट जाता है रंज
मुश्किलें इतनी पड़ीं मुझ पर कि आसाँ हो गईं ।
यूँ ही गर रोता रहा 'ग़ालिब' तो ए अहले-जहाँ
देखना इन बस्तियों को तुम कि वीराँ हो गईं ।

(५७)

दीवानगी से दोश पै .ज़ुन्नार भी नहीं
यानी हमारी जेब में एक तार भी नहीं ।[3]
दिल को नियाज़े-हसरते-दीदार कर चुके
देखा तो हम में ताक़ते-दीदार भी नहीं ।[4]
मिलना तेरा अगर नहीं आसाँ तो सहल है
दुशवार तो यही है कि दुशवार भी नहीं ।

१—पाठशाला । कहते हैं कि मैं चमन में प्रिय के लिये क्या रोया कि बुलबुलें भी ग़ज़ल ख़्वानी (ग़ज़ल पढ़ने) करने लगीं अर्थात अपने गीत भूल कर मेरी तरह प्रिय की याद के गीत गाने लगीं। २—आदी, अभ्यस्त । ३—प्रेम में पागल बनकर हमने अपनी जेब (गरेबान या कुरते का गला) के इतने पुर्ज़े उड़ादिये कि अब एक तार या धागा भी नहीं रह गया जिसे जनेऊ कह सकते। ४—दीदार की हसरत के पीछे रो रोकर और घुलघुल कर हमने दिल को ख़त्म कर दिया । परन्तु अब पता चला कि जिस दर्शन के लिये हमने यह सब कुछ किया अब हम में उसकी ताक़त ही नहीं रह गई । अर्थात सारी मेहनत व्यर्थ गई ।

बे इश्क़ उम्र कट नहीं सकती है और याँ
ताक़त ब-क़द्रे-लज़्ज़ते-आज़ार भी नहीं।[1]

शोरीदगी के हाथ से सर है वबाले-दोश
सहरा में ए .ख़ुदा कोई दीवार भी नहीं।[2]

गुञ्जाइशे-अदावते-अग़ियार एक तरफ़
याँ दिल में ज़ोफ़ से हविसे-यार भी नहीं।[3]

डर नालाहाय ज़ार से मेरे, .ख़ुदा को मान
आख़िर नवाए-मुर्ग़े-गिरफ़्तार भी नहीं।[4]

इस सादगी पे कौन न मर जाय ए .ख़ुदा
लड़ते हैं और हाथ में तलवार भी नहीं।

देखा 'असद' को ख़िलवत-ओ-जलवत[5] में बारहा
दीवाना गर नहीं है तो हुशियार भी नहीं।

१—बिना इश्क़ किये भी जीवन कटना कठिन है क्योंकि बिना प्रेम के जीवन बिलकुल नीरस होता है। परन्तु यहाँ इतनी शक्ति भी नहीं है कि प्रेम में होने वाले कष्टों को सह सकें। २—प्रेम के पागलपन से अपना सर भी कंधे पर भार लग रहा है। पर इसे कैसे अलग करूँ। सहरा में कोई दीवार भी नहीं है कि फोड़ ही डालूँ। ३—ज़ोफ़ = कमज़ोरी, निर्बलता। ग़ैरों (अग़ियार) से बैर की गुंजायश तो एक तरफ़ रही, यहाँ मन में निर्बलता के कारण प्रिय की हवस भी नहीं रही। ४—मेरे रुदन से डर और खुदा को मान, क्योंकि मेरे रुदन में कम प्रभाव सही पर वह ऐसा भी नहीं जैसे पिंजड़े में बन्द पक्षी का होता है। ५—ख़िलवत = एकान्त, जलवत = सब के सामने।

(५८)

मज़े जहान के अपनी नज़र में ख़ाक नहीं
सिवाय-.ख़ूने-जिगर, सो जिगर में ख़ाक नहीं।[1]

मगर .ग़ुबार हुए पर हवा उड़ा ले जाय
वगर न ताब-ओ-तवाँ बाल-ओ-पर में ख़ाक नहीं।[2]

भला उसे न सही कुछ मुझी को रहम आता
असर मेरे नफ़से-बेअसर[3] में ख़ाक नहीं।

ख़याले-जलवए-गुल से ख़राब हैं मैकश[4]
शराबख़ाने के दीवार-ओ-दर में ख़ाक नहीं।

हुआ हूँ इश्क़ की ग़ारतगरी से शर्मिन्दा
सिवाय हसरते-तामीर घर में ख़ाक नहीं।[5]

१—पहली पंक्ति का अर्थ स्पष्ट है। दूसरी पंक्ति की व्याख्या यों होगी कि जिगर का खून पी पी कर समय कटता था अब वह भी नहीं रहा, अब कोई चीज़ ऐसी नहीं रही जो नीरस जीवन को सरस बना सके। २—पहली पंक्ति में 'मगर' शब्द 'शायद' के अर्थ में आया है। कहते हैं शायद मिटकर मिट्टी हो जाने पर हवा मेरी धूल को उड़ा ले जाय, नहीं तो मेरे परों में वह शक्ति नहीं रही कि उड़कर गंतव्य स्थान को पहुँच सकूँ। ३—नफ़स = साँस, बेअसर = प्रभाव हीन। कहते हैं कि मेरी प्रभाव हीन आह यदि उसे दया और रहम पर न उकसा सकी तो मुझे ही अपने पर तरस आया होता कि मैं यों प्रेम में अपने को बरबाद न करता। ४—पीने वाले, शराबी। ५—इश्क़ ने घर को बिलकुल बरबाद कर दिया है। अब तो सिवाय गृह निर्माण की अभिलाषा के और घर में कुछ रहा ही नहीं जो इश्क़ को बरबादी के लिये भेंट करूँ। अपनी इस दरिद्रता के लिये शर्मिन्दा होना पड़ रहा है।

(५६)

दिल ही तो है न संग-ओ-ख़िश्त[1] दर्द से भर न आय क्यों
रोएँगे हम हज़ार बार कोई हमें सताये क्यों ?

दैर[2] नहीं, हरम[3] नहीं, दर[4] नहीं, आस्ताँ[5] नहीं
बैठे हैं रहगुज़र[6] पै हम, ग़ैर हमें उठाय क्यों ?

दशनए-ग़मज़ा जां सताँ[7] नावके-नाज़ बे पनाह[8]
तेरा ही अक्से-रुख़ सही सामने तेरे आय क्यों ?

क़ैदे-हयात-ओ-बन्दे-ग़म[9] अस्ल में दोनों एक हैं
मौत से पहले आदमी ग़म से निजात पाय क्यों ?

हुस्न और उस पै हुस्ने-ज़न,[10] रह गई बुलहवस[11] की शर्म
अपने पै एतमाद[12] है, और को आज़माय क्यों ?

१—संग = पत्थर, ख़िश्त = ईंट । २—मंदिर । ३—मसजिद । ४—द्वार । ५—चौखट । ६—सड़क । ७—दशना = छुरी, गमज़ा = आँख का इशारा ८—नाज़ का तीर। तेरी आँख का इशारा प्राण घातक कटार है और तेरे नाज़ ओ—अदा का तीर ऐसा है ज़िससे कोई बच नहीं सकता इस लिए तू दर्पण में अपना प्रतिविम्ब न देख । क्योंकि यद्यपि वह तेरे ही रूप का प्रतिविम्ब होगा किन्तु उसके पास भी यही अस्त्र होंगे इस लिये तुझको ही तेरे रूप से कहीं कोई हानि न पहुंच जाय । ६—दुख के बन्धन । क़ैदे-हयात अर्थात जीवन का बन्धन तथा दुखके बन्धन दोनों ही जब एक हैं तो मृत्यु से पहले मनुष्य दुख से कैसे मुक्ति पा सकता है । १०—अच्छे भाव । ११—विलासी । १२—विश्वास । प्रिय को एक तो अपने सौन्दर्य पर विश्वास है दूसरे मेरे प्रतिद्वन्दी के प्रति वह अच्छे भाव रखता है और समझता है कि वह उसका सच्चा प्रेमी है इसलिये वह दूसरों के प्रेम की परीक्षा लेने की आवश्यकता नहीं समझता । यही कारण है कि उस विलासी की आबरू रह गई और उसे प्रेम की परीक्षा नहीं देनी पड़ी । अपने पै एतमाद है अर्थात अपने सौन्दर्य पर भरोसा है ।

वाँ वो ग़ुरूरे-इज़्ज़-ओ-नाज़[1] याँ ये हिजाबे-पासे-वज़्अ[2]
राह में हम मिलें कहाँ बज़्म में वो बुलाय क्यों ?
हाँ वो नहीं ख़ुदा परस्त, जाओ वो बेवफ़ा सही
जिसको हो दीन-ओ-दिल अज़ीज़,[3] उसकी गली में जाय क्यों ?
'ग़ालिबे' ख़स्ता के बग़ैर कौन से काम बन्द हैं
रोइये ज़ार ज़ार क्या, कीजिये हाय हाय क्यों ?

(६०)

ग़ुञ्चए-नाशगुफ़्ता[4] को दूर से मत दिखा कि यूँ
बोसे[5] को पूछता हूँ मैं, मुँह से मुझे बता कि यूँ ।
पुरसिशे-तर्ज़े दिलबरी[6] कीजिये क्या कि बिन कहे
उसके हरेक इशारे से निकले है यह अदा कि यूँ ।
रात के वक़्त मय पिये, साथ रक़ीब को लिये
आए वो याँ ख़ुदा करे, पर न ख़ुदा करे कि यूँ ।[7]

१—मान और रूप का घमंड । २—स्वाभिमान की आदत की शर्म । अर्थात वह अपने घमंड में है और यहाँ अपने स्वाभिमानी स्वभाव का लिहाज़ है । फिर राह में हम कैसे मिलें और वह अपनी सभा में कैसे बुलाये । ३— जिसको धर्म और दिल प्यारे हों । ४—अधखिली कली । ५—चुम्बन । बड़ा शोख़ शेर है। प्रिय से कहते हैं कि मैंने पूछा कि चुम्बन कैसे लिया जाता है तो तूने अधखिली कली को होंठों से लगा कर दिखा दिया । मैं चाहता हूँ कि तू मेरा चुम्बन लेकर बता कि ऐसे प्यार करते हैं । ६—दिल छीनने का ढंग क्या पूछिये, क्योंकि वह कुछ नहीं कहता फिर भी उसके प्रत्येक भाव से यह प्रकट होता है कि यों दिल छीनते हैं । ७—सीधा सा शेर है। अर्थात् यह तो चाहते हैं कि प्रिय यहाँ आए पर यह नहीं चाहते कि वह शराब पिये हो और रक़ीब को साथ में लिये हो । इस रूप में उसका आना तो आनन्द नहीं कष्ट का कारण होगा ।

ग़ैर से रात क्या बनी, यह जो कहा तो देखिये
सामने आन बैठना और ये देखना कि यूँ।[1]

बज़्म में उसके रू-ब-रू क्यों न ख़मोश बैठिये
उसकी तो ख़ामुशी में भी है यही मुद्दआ कि यूं।[2]

मैंने कहा कि बज़्मे-नाज़ चाहिये ग़ैर से तही[3]
सुन के सितम ज़रीफ़ ने मुझको उठा दिया कि यूं।

मुझसे कहा जो यार ने जाते हैं होश किस तरह
देख के मेरी बे.ख़ुदी चलने लगी हवा कि यूं।[4]

जो ये कहे कि रेख़्ता क्योंकि हो रश्के-फ़ारसी
गुफ़्तए-'ग़ालिब' एक बार पढ़ के उसे सुना कि यूं।[5]

१—पूछा था कि रात दूसरे के साथ कैसी कटी तो सामने बैठ गये और तेज़ निगाहों से देखने लगे, मतलब यह कि दूर ही बैठा रहा। २—प्रिय स्वयं चुप रहता है इस लिये समझ लेना चाहिये कि वह दूसरों को भी इसी प्रकार चुप देखना चाहता है। ३—तही = ख़ाली। मेरे यह कहने पर कि तुम्हारी महफ़िल में कोई ग़ैर न रहना चाहिये, उसने मुझे ही हाथ पकड़ कर उठा दिया। ४—इस शेर में होश उड़ने के बारे में पूछा गया है इस लिये हवा के चलने का ज़िक्र किया गया है। ५—रेख़्ता = ग़ज़ल। 'ग़ालिब' के समय में फ़ारसी का बोल बाला था और उसके मुक़ाबले में उर्दू को तुच्छ समझा जाता था। 'ग़ालिब' इस मक़ता में फ़ारसी की बड़ाई करने वालों को सम्बोधित कर कहते हैं कि जो लोग उर्दू ग़ज़ल की बड़ाई (रश्के-फ़ारसी = फ़ारसी को जिससे ईर्ष्या हो) में सन्देह करें उनको मेरी उर्दू ग़ज़ल सुना कर कहो कि इस प्रकार की ऊँची ग़ज़ल भी उर्दू में कही जाती है।

(६१)

वारस्ता[1] इससे हैं कि मुहब्बत ही क्यों न हो
कीजे हमारे साथ अदावत ही क्यों न हो।

छोड़ा न मुझ में ज़ोफ़[2] ने रङ्ग इख़्तलात[3] का
है दिल पै बार नक़्शे-मुहब्बत ही क्यों न हो।

है मुझको तुझसे तज़किरए-ग़ैर का गिला
हर चन्द बरसबीले-शिकायत[4] ही क्यों न हो।

पैदा हुई है, कहते हैं, हर दर्द की दवा
यूं हो तो चारए ग़मे उलफ़त[5] ही क्यों न हो।

है आदमी बजाय ख़ुद एक महशरे ख़याल[6]
हम अंजुमन समझते हैं ख़िलवत ही क्यों न हो।

वारस्तगी बहानए-बेगानगी[7] नहीं
अपने से कर, न ग़ैर से वहशत ही क्यों न हो।

१—आज़ाद। हम यह नहीं कहते कि हमसे प्रेम ही करो अदावत (वैर) भी रख सकते हो, परन्तु इतना अवश्य हम चाहते हैं कि वह हमसे ही हो, अर्थात किसी भी दूसरे को इस में शरीक न करो। २—दुर्बलता। ३—जोश के साथ प्रिय से मिलन। ४—शिकायत के सिलसिले में। ५—प्रेम पीड़ा का इलाज। ६—महशर = क़यामत, ख़याल = विचार। कहते हैं आदमी स्वयं विचारों का एक प्रलय है। क़यामत में मुर्दे भी जी उठेंगे, इसी प्रकार मनुष्य के मन में भी मरे हुए, भूले हुए विचार जाग उठते हैं और वह कभी विचारों से ख़ाली नहीं होता इस लिये वह लाख कहे कि हमारे मन में कुछ नहीं है, हम उसे ख़िलवत (एकान्त) न कहेंगे, महफ़िल ही कहेंगे। ७—बेगाना बनने का बहाना। आज़ादी या बंधनों से मुक्त हो जाने के ये मानी नहीं कि इसे दूसरों से बेगानगी बरतने का बहाना बनालो। ऐसा करना यह प्रकट करता है कि तुम अपनी स्वच्छन्दता पर घमंड करते हो यदि दूसरों को छोड़ना है तो अपने को छोड़ो, अपनी इच्छाओं और वासनाओं को छोड़ो।

उस फ़ितना .ख़ू के दर से अब उठते नहीं 'असद'
इसमें हमारे सर पै क़यामत ही क्यों न हो।

(६२)

तुम जानो तुमको ग़ैर से जो रस्म-ओ राह-हो
मुझको भी पूछते रहो तो क्या गुनाह हो।
बचते नहीं मुआख़िज़ए-रोज़े हश्र[1] से
क़ातिल अगर रक़ीब है तो तुम गवाह हो।
क्या वह भी बे गुनह कुश ओ हक़-नाश नास[2] हैं
माना कि तुम बशर नहीं .ख़ुर्शीद ओ-माह हो।
जब मैकदा छुटा तो फिर अब क्या जगह की क़ैद
मसजिद हो, मदरसा हो, कोई ख़ान क़ाह हो।
सुनते हैं जो बहिश्त की तारीफ़ सब दुरुस्त
लेकिन .ख़ुदा करे वो तेरी जलवा गाह[3] हो।
'ग़ालिब' भी गर न हो तो कुछ ऐसा ज़रर[4] नहीं
दुनिया हो यारब और मेरा बादशाह हो।

१—क़यामत के दिन ईश्वर की ओर से पूछ ताछ। कहते हैं कि हश्र के दिन तुमको भी ईश्वर के सामने ज़रूर जाना होगा क्योंकि यद्यपि तुमने मुझे नहीं मारा पर तुम्हारे सामने मैं मारा गया हूँ। २—बेगुनह कुश =बेगुनाहों को मारने वाला। हक़ नाशनास=हक़,अधिकार न पहचानने वाला। कहते हैं कि माना तुम मनुष्य नहीं सूर्य और चाँद हो, परन्तु वे तो न किसी को क़त्ल करते हैं न किसी का हक़ मारते हैं। फिर तुम में ये गुण क्यों हैं। ३—दर्शन स्थान। स्वर्ग की जोकुछ भी तारीफ़ सुनी वह तो मानते ही हैं कि ठीक होगी। अब केवल एक अभिलाषा और है कि वहाँ तेरे दर्शन भी होजाएँ अर्थात वहाँ तू भी हो। ४—हर्ज नहीं। बादशाह से यहाँ बहादुर शाह 'ज़फ़र' से मतलब है।

(६३)

गई वो बात कि हो गुफ़्तगू तो क्यों कर हो
कहे सेकुछ न हुआ फिर कहो तो क्योंकर हो।[1]
हमारे ज़ेहन में इस फ़िक्र का है नाम विसाल
कि गर न हो तो कहाँ जायँ हो तो क्योंकर हो।[2]
अदब है और यही कशमकश तो क्या कीजे
हया है और यही गोमगो तो क्यों कर हो।[3]
उलझते हो तुम अगर देखते हो आईना
जो तुम से शहर में हों एक दो तो क्यों कर हो।
जिसे नसीब हो रोज़े-सियाह[4] मेरा सा
वो शख़्स दिन न कहे रात को तो क्योंकर हो।
हमें फिर उनसे उमीद और उन्हें हमारी क़द्र
हमारी बात ही पूछें न वो तो क्योंकर हो।
ग़लत न था हमें ख़त पर गुमाँ तसल्ली का
न माने दीदए-दीदार जू[5] तो क्यों कर हो।

१—कहते हैं कि वह बात तो गई जब यह सोचते थे कि बात शुरू करें तो कैसे। परन्तु अब तो बात कह भी दी और कोई असर भी न हुआ, अब क्या करें। २—हमारे लिये तो वस्ल (मिलन) इसी चिन्ता का नाम है कि यदि मिलन न हुआ तो कहाँ जाएँ और यदि मिलन हो तो कैसे। ३—अर्थात बात कैसे बने, क्योंकि हम तुम्हारे अदब (आदर) के कारण कुछ कहते नहीं और तुम शर्म के कारण बात नहीं करते। ४—काला दिन, कष्टों से भरा जीवन। ५—दर्शनों की प्यासी आँख।

(६४)

किसी को देके दिल कोई नवा संजे-फ़ुग़ा क्यों हो
न हो जब दिल ही सीने में तो फिर मुँह में ज़बाँ क्यों हो [1]

वो अपनी ख़ू [2] न छोड़ेंगे हम अपनी वज़अ [3] क्यों बदलें
सुबुक सर [4] बन के क्या पूछें कि हमसे सरगराँ [5] क्यों हो।

किया ग़मख़्वार ने रुसवा लगे आग इस मुहब्बत को
न लाए ताब जो ग़मकी वो मेरा राज़दाँ क्यों हो। [6]

वफ़ा कैसी, कहाँ का इश्क़, जब सर फोड़ना ठहरा
तो फिर ए संग-दिल तेरा ही संगे-आस्ताँ [7] क्यों हो?

१—कहते हैं कि जब किसी को दिल दे दिया जाय तब रोने धोने और फ़रियाद करने का क्या काम और जब दिल सीने में न हो तब मुँह में ज़बान भी न रखनी चाहिये। २—आदत। ३—आदत। ४—हलका सर। ५—भारी सर। इस शेर में सुबक सर का अर्थ होगा गिर जाना और सरगराँ का अर्थ है नाराज़। कहते हैं कि वह अपनी आदत न छोड़ेंगे तो हम क्यों अपनी आदत छोड़ें। हम क्यों गिरकर पूछें कि तुम हमसे क्यों ख़फ़ा हो? ६—कहते हैं कि मेरे दुखों की ताब न लाकर मेरे ग़मख़्वार (साथी, दोस्त) ने ही फ़रियाद शुरू करदी और इस प्रकार मेरे प्रेम का भेद सब पर प्रकट हो गया। ऐसी मुहब्बत को आग लगे। जो कोई मेरे दुखों को देखकर स्वयं सहन नहीं कर सकता वह मेरा राज़दाँ (भेदी) क्यों बनता है। ७—द्वार का पत्थर। कहते हैं कि जब सिर फोड़ना ही प्रेम का परिणाम है तो फिर कहाँ की वफ़ा और कैसा इश्क़ और फिर यह भी क्या ज़रूरी है कि वह पत्थर जिससे सिर फोड़ना है वह तेरे ही द्वार का हो।

क़फ़स में मुझसे रूदादे-चमन [1] कहते न डर हमदम
गिरी थी जिस पै कल बिजली वो मेरा आशियाँ क्यों हो।

ये कह सकते हो हम दिल में नहीं हैं पर ये बतलाओ
कि जब दिल में तुम्हीं तुम हो तो आँखों से निहाँ [2] क्यों हो।

ग़लत है जज़्बे-दिल का शिकवा देखो जुर्म किसका है
न खींचो गर तुम अपने को कशाकश दरमियां क्यों हो? [3]

ये फ़ितना आदमी की ख़ाना-वीरानी को क्या कम है
हुए तुम दोस्त जिसके दुश्मन उसका आस्माँ क्यों हो। [4]

१—चमन का हाल। ग़ज़ब का शेर है। पिंजड़े में बन्द पक्षी दूसरे स्वतन्त्र पक्षी से चमन का हाल पूछता है। वह पक्षी जानता है कि बन्दी पक्षी का नीड़ भी कल बिजली गिरने से जल गया है। वह तनिक संकोच करता है बताते हुए। इस पर बन्दी पक्षी उसे ढाढ़स देते हुए कहता है कि तुम मुझसे चमन का हाल कहो तो। यह ज़रूरी नहीं है कि कल जिस पर बिजली गिरी थी वह मेरा ही घोंसला हो। २—निहित। ३—कहते हैं कि मेरे हृदय के आकर्षण की शिकायत करना और यह कहना कि उसने हमें कशमकश में डाल रक्खा है, ग़लत है। तुम स्वयं खिन्चते हो यदि तुम न खिंचो और मेरे हृदय की आकर्षण-शक्ति के कारण मेरे पास चले आओ तो यह खींचातानी क्यों हो। ४—फ़ितना का शाब्दिक अर्थ है झगड़ा परन्तु यहाँ ग़ालिब प्रिय के मनोहर रूप और बूटे से क़द को फ़ितना कह कर कहते हैं कि मनुष्य को तबाह व बरबाद करने के लिए यही क्या कम है। और क्योंकि तुम्हारी दोस्ती भी तुम्हारे प्रेमी के लिये बरबादी का कारण है अतः उसके साथ आसमान को दुश्मनी करने की ज़रूरत ही नहीं। वह तो यों भी बरबाद हो जायगा।

यही है आज़माना तो सताना किसको कहते हैं
अदू[1] के हो लिये जब तुम तो मेरा इम्तहाँ क्यों हो।
कहा तुमने कि क्यों हो ग़ैर के मिलने में रुसवाई
बजा कहते हो, सच कहते हो, फिर कहियो कि हाँ क्यों हो।[2]
निकाला चाहता है काम क्या तअनों से तू 'ग़ालिब'
तेरे बेमेह कहने से वो तुझ पर मेहबाँ क्यों हो ?[3]

(६५)

रहिये अब ऐसी जगह चलकर जहाँ कोई न हो *
हम-सुख़न[4] कोई न हो और हम-ज़बाँ[5] कोई न हो।
बे दर-ओ-दीवार[6] का एक घर बनाया चाहिये
कोई हमसाया[7] न हो और पासबाँ[8] कोई न हो।

१—दुश्मन। २—इस शेर में कितना तीखा व्यङ्ग है। प्रिय के कहने पर कि ग़ैर से मिलने में बदनामी क्यों होगी उससे बार बार कहना कि ठीक कहते हो सच कहते हो और फिर यही वाक्य दोहराने की फ़रमायश करना कितना मीठा व्यङ्ग है। ३—इस मक़ते में भी व्यंग है। अपने से कहते हैं कि तू अपना काम तानों से निकालना चाहता है। तू चाहता है कि तू उसे बेमुरव्वत कहे तो वह तुझ पर मेहरबान हो जायगा। ऐसा न होगा।

* ये केवल तीन शेरों की ग़ज़ल है। इसे मुसलसल (क्रम बद्ध) ग़ज़ल भी कह सकते हैं और तीन शेरों का क़ता भी क्योंकि क़ते में भी एक ही विषय क्रम बद्ध चलता है। इसमें कवि पहली ही पंक्ति में कह देता है कि वह ऐसी जगह जाना चाहता है जहाँ कोई न हो। और अगली पाँचों पंक्तियों में इसी आकांक्षा का विस्तृत रूप से वर्णन करता है।

४—बात करने वाला। ५—वही भाषा बोलने वाला। ६—जिसमें न द्वार हो न दीवार ७—पड़ोसी। ८—रक्षक।

पड़िये गर बीमार तो कोई न हो तीमारदार[1]
और अगर मर जाइये तो नौहा-ख़्वां[2] कोई न हो।

(६६)

है सब्ज़ा ज़ार हर दर-ओ-दीवारे ग़मकदा
जिसकी बहार यह हो फिर उसकी ख़िज़ाँ न पूछ।[3]
ना चार बेकसी की भी हसरत उठाइये
दुशवारिये-रह-ओ-सितमे-हम रहाँ न पूछ।[4]

(६७)

तोड़ बैठे जब कि हम जाम-ओ-सबू[5] फिर हमको क्या
आस्माँ से बादए-गुलफ़ाम[6] गर बरसा करे।

(६८)

मैं हूँ मुशताक़े-जफ़ा[7] मुझ पै जफ़ा और सही
तुम हो बेदाद में ख़ुश इससे सिवा और सही।

१—सेवा सुश्रुषा करने वाला। २—रोने वाला। ३—ग़मकदा अर्थात् दुख का घर। घर अच्छी तरह वीरान हो जाय और बहुत दिनों तक वीरान रहे, वर्षा के कारण दीवारों पर कोई जम जाय और आँगन में लम्बी-लम्बी घास उग आए तो उसकी हरियाली बहार का दृश्य उत्पन्न करेगी। कहते हैं जिस घर की बहार इतनी बरबादी की प्रतीक हो उसकी ख़िज़ाँ का हाल क्या पूछते हो। ४—दुशवारिये-रह अर्थात् राह की कठिनाई, सितमे-हमरहाँ अर्थात् हमराहियों के सितम। कहते हैं प्रेम पथ की कठिनाइयों और साथ चलने वालों के अत्याचार का हाल मुझसे न पूछो। मुझसे ये सहन नहीं हो सका इसीलिये लाचार हो मुझे एकान्त और बेकसी की शरण लेनी पड़ी। अब मैं उसी की इबादत करूँगा और प्रिय को खोजूँगा। ५—प्याला और सुराही। ६—पानी की सी सुन्दर शराब। ७—जफ़ा का इच्छुक।

ग़ैर की मर्ग[1] का ग़म किस लिये ए ग़ैरते माह[2]
हैं हवस-पेशा[3] बहुत वह न हुआ, और सही।
तुम हो बुत फिर तुम्हें पिन्दारे-.खुदाई[4] क्यों हो
तुम .खुदा वन्द[4] ही कहलाओ, .खुदा और सही।
कोई दुनिया में मगर बाग़ नहीं है वायज़
.खुल्द[5] भी बाग़ है, ख़ैर आब-ओ-हवा और सही।
मुझको वह दो कि जिसे खाके न पानी माँगू
ज़हर कुछ और सही आबे-बक़ा[7] और सही।

१—मृत्यु। २—जिसके सौंदर्य से चाँद भी लजाये। ३—वासना के गुलाम। ग़ैर—अर्थात् प्रतिद्वन्द्वी के मरने का तुम्हें दुख क्यों है। वह तो तुमसे अपनी वासना की पूर्ति के लिये मिलता था। इसलिए उसके जैसे प्रेमी तो तुम्हें बहुत मिल जायँगे। मतलब यह है कि मैं ही तुम्हारा सच्चा प्रेमी हूँ। ४—.खुदाई का घमंड। यहाँ बुत के माने हैं सुन्दरता की तस्वीर और .खुदावन्द माने स्वामी, मालिक। कहते हैं तुमको मैं अपना मालिक तो मानता ही हूँ, फिर क्या हर्ज है यदि तुम .खुदावन्द ही कहलाओ। इस प्रकार तुम घमंड और अभिमान के इलज़ाम से भी बचे रहोगे। ५—.खुल्द अर्थात् स्वर्ग। इस शेर में 'मगर' शब्द 'शायद' के अर्थ में आया है। वाइज़ या उपदेशक से कहते हैं कि तुम जो हर समय जन्नत जन्नत (.खुल्द) की रट लगाते रहते हो, शायद दुनिया में कोई और बाग़ है ही नहीं। मतलब यह कि दुनिया में हज़ारों बाग़ हैं, वैसा ही बाग़ स्वर्ग भी होगा यह दूसरी बात है कि उसकी आब ओ-हवा कुछ और हो। ७—'पानी माँगूँ' के दो अर्थ हैं। एक तो यह कि ऐसा ज़हर खालूँ कि पानी न माँग सकूँ यानी तुरन्त मर जाऊँ। दूसरे यह कि प्यास ही न लगे, यह अर्थ आबे-बक़ा (अमृत) से सम्बन्ध रखता है। दोनों पदार्थ एक दूसरे के बिलकुल विपरीत प्रभाव वाले हैं फिर भी दोनों का किस सुन्दर ढङ्ग से ज़िक्र किया गया है।

तेरे कूचे का है मायल दिले-मुज़तर मेरा
काबा एक और सही क़िबला-नुमा और सही।[1]
हुस्न में हूर से बढ़कर नहीं होने के कभी
आपका शेवा-ओ-अंदाज़-ओ-अदा और सही।[2]
क्यों न फ़िरदौस[3] को दोज़ख़ से मिलालें यारब
सैर के वास्ते थोड़ी सी फ़िज़ा[4] और सही।
मुझसे 'ग़ालिब' यह 'अलाई' ने[5] ग़ज़ल लिखवाई
एक बेदाद-गरे रञ्ज-फ़ज़ा और सही।

(६६)

मसजिद के ज़ेरे-साया ख़राबात[1] चाहिये
भौं पास आँख क़िबलए-हाजात[2] चाहिये।

१—काबा और क़िबला नुमा दोनों का मतलब यहाँ पवित्र स्थान से है। कहते हैं मेरा व्याकुल मन तेरे कूचे की ओर आकृष्ट हो रहा है। अच्छा है अब एक काबा की जगह दो काबा हो जायंगे। २—तुम सुन्दरता में हूर से भी बढ़कर हो। दूसरे उससे बढ़ कर न होंगे चाहे उनमें तुम्हारी तरह नाज़ व अदा भी आ जाय। ३—स्वर्ग। ४—वायुमण्डल। ५—'अलाई' लुहारू के नवाब अलाउद्दीन का तख़ल्लुस था। वे 'ग़ालिब' के बड़े दोस्त थे। उन्हें प्यार से बेदाद करने वाला और रञ्ज बढ़ाने वाला कहा गया है। ग़ालिब इस प्रकार की फ़रमायशों को भी एक बेदाद कहते हैं। ६—क़िबलए हाजात दूसरों की हाजत या आवश्यकताएं पूरी करने वाले को कहते हैं। यहाँ शायर इस नाम से वाइज़ या उपदेशक को सम्बोधित कर कहता है कि मसजिद के नीचे मधुशाला भी होनी चाहिये। भौं और आँख की उपमा इसलिये दी गई है कि भौं मेहराब की तरह होती है इसलिये उसे मसजिद कहा है और आँख को उसकी मस्ती के कारण मधुशाला कहा गया है। कहते हैं जैसे .खुदा ने भौं के नीचे आंख बनाई है वैसे ही मसजिद के नीचे (ज़ेरे-साया = छाँव में) शराबख़ाना होना चाहिये।

सीखे हैं मह-रुखों[1] के लिए हम मुसव्विरी
तक़रीब[2] कुछ तो बहरे-मुलाक़ात[3] चाहिये।

मय से ग़रज़ निशात[4] है किस रूसियाह[5] को
एक गूना[6] बेखुदी मुझे दिन रात चाहिये।

है रंगे-लाला-ओ-गुल-ओ-नसरीं जुदा जुदा
हर रङ्ग में बहार का असबात चाहिये।[7]

सर पाय-ख़ुम पै चाहिये हँगामे-बे.ख़ुदी
रू सूए-क़िबला वक़्ते-मनाजात चाहिये।[8]

१—चाँद सी सूरत वालों। २—बहाना। ३—मुलाक़ात के लिये। कहते हैं हमने सुन्दर रूप वालों से मिलने के बहाने के लिये चित्रकारी सीखी है। ४—आनन्द। ५—रू=चेहरा, सियाह=काला। ६—एक प्रकार की। अपने को रू-सियाह उसी प्रकार कहा है जैसे कमबख्त, अभागा कहा जाता है। यानी शराब मैं आनन्द और मस्ती के लिये नहीं पीता। मैं तो अपने को आत्मविस्मृत बनाने के लिए मदिरा पान करना चाहता हूँ, जिसमें कि संसार के दुखों चिन्ताओं से मुक्ति पा सकूं। ७—लाला, गुलाब और सेवती इन सबके रङ्ग भिन्न हैं लेकिन हर रंग से बहार का सबूत मिलता है शायर का मतलब है कि सृष्टि की प्रत्येक वस्तु अपने रंग रूप में कितनी ही भिन्नता रखती हो, फिर भी हमें सब में उस निराकार ईश्वर की झलक दिखाई देती है जिसने उनकी रचना की है। ८—पाय-ख़ुम अर्थात् शराब के मटके के पाँव पर शराब से मस्त होकर सर झुका दो जैसे लोग ईश्वर से प्रार्थना करते समय पश्चिम (उधर काबा है इसलिये) की ओर मुंह करते हैं। मतलब यह कि शराबी के लिये शराब का मटका भी काबे से कम नहीं होना चाहिये।

नश्वो-नुमा[1] है अस्ल से 'ग़ालिब' फ़रोअ[2] को
ख़ामोशी ही से निकले है जो बात चाहिये।

(७०)

रहे उस शोख़ से आज़ुर्दा[3] हम चन्दे तकल्लुफ़ से
तकल्लुफ़ बरतरफ़ था एक अन्दाज़े जुनूँ[4] वो भी।
ख़याले-मर्ग[5] कब तसकीं दिले-आज़ुर्दा को बख़्शे
मेरे दामे तमन्ना[6] में है एक सैदे-ज़बू[7] वो भी।
न करता काश नाला मुझको क्या मालूम था हमदम
कि होगा बाइसे-अफ़ज़ायशे दर्दे दुरूँ[8] वो भी।

१—विकास। २—शाखाओं। अस्ल अर्थात् जड़ ही से शाखाएं विकसित होती हैं। इसी प्रकार मनुष्य खामोशी में हर बात सोचता है और उसी खामोशी में उन बातों के जवाब भी सोच लेता है। इसका मतलब यह हुआ कि ख़ामोशी ही हर बात की जड़ है। ३—ख़फ़ा, नाराज़। यानी उस शोख़ से हम चन्द दिनों जो ख़फ़ा रहे वह भी एक बनावट थी। पर असल बात यह है कि वह भी एक पागलपन था। नहीं तो हम और उस से ख़फ़ा हों। प्रेमी के लिये यह सम्भव ही नहीं। ४—मृत्यु का विचार। ५—तमन्ना का जाल। ६—कमज़ोर शिकार। कहते हैं मेरे दुखी हृदय को मृत्यु का विचार भी कोई सान्त्वना नहीं दे सकता। मुझे मौत भी नहीं आ सकती। वह भी मेरी इच्छाओं और आशाओं के जाल में उसी प्रकार क़ैद है जिस प्रकार कोई कमज़ोर शिकार जाल में फँसा तड़पता हो और जाल को तोड़कर बाहर निकलने की शक्ति न रखता हो। ७—आंतरिक पीड़ा बढ़ाने का कारण। मुझे यदि पता होता कि रुदन करने से मेरे मन की पीड़ा और बढ़ जायगी तो कभी ऐसा न करता। क्योंकि रुदन का कोई प्रभाव न पड़ने के कारण मेरी व्याकुलता और पीड़ा और बढ़ गई है।

मए-इशरत की ख़्वाहिश साक़िये-गर्दूं[1] से क्या कीजे
लिये बैठा है एक दो चार जामे-वाज़गूं[2] वो भी।

मेरे दिल में है 'ग़ालिब' शौक़े-वस्ल-ओ-शिकवए-हिजराँ
ख़ुदा वह दिन करे जो उससे मैं यह भी कहूँ वो भी।[4]

(७१)

रंज ताक़त से सिवा हो तो न पीटूँ क्यों कर
ज़ेहन में ख़ूबिये-तसलीम-ओ-रज़ा है तो सही।[1]

है ग़नीमत कि ब-उम्मीद गुज़र जायगी उम्र
न मिले दाद मगर रोज़े-जज़ा है तो सही।[2]

१—आसमान का साक़ी। २—औंधे प्याले। असल में ईश्वर को साक़िये-गर्दूं कहा गया है। कहते हैं उससे ख़ुशी की शराब माँगने से क्या लाभ। वह भी तो एक दो चार औंधे प्याले लिये बैठा है। औंधा प्याला आकाश को कहा गया है। आकाशों की संख्या सात मानी गई है इस लिये एक दो चार अर्थात् सात कहा है। मतलब यह है कि उसके प्याले तो स्वयं औंधे पड़े हैं वह हमें क्या शराब देगा। ३—मेरे दिल में मिलन का शौक़ भी है और वियोग की शिकायतें भी। ख़ुदा वह दिन लाए जब मैं उससे दोनों बातें करूं। ४—मेरे मन में यह ख़ूबी अवश्य है कि मैं उसकी प्रत्येक जफ़ा को तसलीम (स्वीकार) करूं और राजी (रज़ा) रहूँ, पर जब दुख मेरी सहन शक्ति से आगे बढ़ जाय तो क्या करूं। ५—यही बहुत है कि जीवन इस आशा के साथ बीत जायगा कि यहाँ मैं जिस साहस से प्रेम के कष्ट झेल रहा हूँ उसकी कोई प्रशंसा न करे किन्तु क़यामत के दिन (रोज़े-जज़ा) जब हर व्यक्ति को उसके भले बुरे कर्मों का फल मिलेगा, मुझे भी मेरे दुखों का पुरस्कार मिलेगा।

दोस्त गर कोई नहीं है जो करे चारागरी
न सही, लेक तमन्नाए दवा है तो सही।[1]

ग़ैर से देखिये क्या ख़ूब निबाही उसने
न सही हम से, पर उस बुत में वफ़ा है तो सही।

नक़्ल करता हूँ उसे नामए आमाल[2] में मैं
कुछ न कुछ रोज़े अज़ल तुम ने लिखा है तो सही।

कभी आ जायगी क्यों करते हो जल्दी 'ग़ालिब'
शोहरए-तेजिये-शमशीरे-क़ज़ा है तो सही।[3]

(७२)

ता हम को शिकायत की भी बाक़ी न रहे जा
सुन लेते हैं गो ज़िक्र हमारा नहीं करते।

'ग़ालिब' तेरा अहवाल सुना देंगे हम उनको
वो सुन के बुला लें ये इजारा नहीं करते।

१—चारागरी अर्थात् इलाज। कहते हैं कोई दोस्त इलाज करने वाला नहीं है तो न सही, लेकिन अभी दवा करने की इच्छा तो है अर्थात् अभी अच्छे होने की आशा है। इसका यह भी मतलब है कि तमन्ना ही चिकित्सक सिद्ध होगी और इसी तमन्ना में जीते रहेंगे। २—आमाल नामा उस काग़ज़ को कहते हैं जिसमें मनुष्य के भले बुरे कर्म लिखे जाते हैं और क़यामत के दिन ख़ुदा उसी के अनुसार मनुष्य से 'पूछ ताछ' करेगा। 'ग़ालिब' उस दिन की कल्पना कर ईश्वर से कहते हैं कि मैंने तो संसार में वही किया जो तूने सृष्टि की रचना के समय मेरे भाग्य में लिख दिया था। और जब मैंने वही किया जो तूने लिखा था तो अपने आमाल नामे में मैंने एक प्रकार से वही नक़ल कर दिया है। फिर मुझसे पूछ ताछ न करना। ३—शोहरए-तेजिये-शमशीरे क़ज़ा का अर्थ है मृत्यु की तलवार की तेजी की प्रसिद्ध।

MODERN COLLEGE
POONA 5.

(७३)

घर में था क्या जो तेरा ग़म उसे ग़ारत करता
वो जो रखते थे हम एक हसरते तामीर[१] सो है।

(७४)

ग़मे-दुनिया से गर पाई भी फ़ुरसत सर उठाने की
फ़लक का देखना तक़रीब तेरे याद आने की।[२]

खुलेगा किस तरह मजमूं मेरे मकतूब[३] का यारब
क़सम खाई है उस काफ़िर ने काग़ज़ के जलाने की।

उन्हें मंज़ूर अपने ज़ख्मियों का देख आना था
उठे थे सैरे-गुल को देखना शोख़ी बहाने की।[४]

१—निर्माण को अभिलाषा। कहते हैं, घर के पुनर्निर्माण करने की हसरत के सिवा हमारे घर में और क्या था कि प्रेम का दुख उसे बरबाद करता। यही निर्माण की अभिलाषा बाक़ी रह गई थी सो अब भी है और प्रेम का दुख भी उसे नष्ट नहीं कर सका। २—कहते हैं कि दुनिया के लोगों से तनिक छुटकारा मिला भी तो सिर उठाने पर आस्मान नजर आजाता और वह भी मुझ पर अत्याचार करता रहता है इस कारण उसको देखते ही तू याद आजाता है और मैं फिर दुखी हो जाता हूँ। ३—पत्र। ४—अर्थात् वे अपने घायलों को देखना वैसा ही समझते जैसे फूलों को देखने के लिये बाग़ की सैर करना। बहाने की शोख़ी स्पष्ट है।

हमारी सादगी थी इलतफाते-नाज़ पर मरना
तेरा आना न था ज़ालिम मगर तमहीद जाने की[१]।
करूं क्या ख़ूबिये औज़ाए-अबनाए ज़माँ[२] 'ग़ालिब'
बदी की उसने जिससे हमने की थी बारहा नेकी।

(७५)

दर्द से मेरे है तुझको बेक़रारी हाय-हाय
क्या हुई ज़ालिम तेरी ग़फ़लत शआरी हाय हाय[३]
तेरे दिल में गर न था आशोबे-ग़म का हौसला
तूने फिर क्यों की थी मेरी ग़मगुसारी हाय-हाय।[४]
क्यों मेरी ग़मख्वारगी का तुझको आया था ख़याल
दुश्मनी अपनी थी मेरी दोस्तदारी हाय-हाय।[५]

१—दूसरी पंक्ति में 'मगर' शब्द 'सवा' या 'सिवाय' के अर्थ में आया है। कहते हैं यह तो हमारी सादगी थी कि हम इसे तेरा प्रेम समझे और तेरे प्रेम पर मरते रहे, लेकिन ज़ालिम! तेरा आना सिवाय तेरे जाने की भूमिका के और कुछ नहीं था, यानी तू आया और तुरन्त लौट गया २—दुनिया वालों के व्यवहार की ख़ूबी। यह मक़ता सीधा सादा है। केवल 'ख़ूबी' शब्द व्यंग के रूप में आया है। ३—यह ग़ज़ल माशूक़ की मृत्यु पर मर्सिये के रूप में लिखी गई है। उसे मरते देख कर कहते हैं कि हाय हाय, तू मेरे दर्द से व्याकुल है। इससे अच्छा तो यही था कि तू बेपरवाही (ग़फ़लत शआरी) ही करता रहता और मेरे हाल पर ध्यान न देता। यहाँ 'ज़ालिम' इस लिये कहा गया है कि माशूक़ ने बेपरवाही छोड़कर अपने ऊपर ज़ुल्म किया है। ४—यदि ग़म सहने की ताब नहीं थी तब तूने मेरे दुख में क्यों हाथ बँटाना चाहा, क्यों ग़मख्वार बना। ५—मेरे ग़मख्वार बनने और दोस्ती निभाने में तूने अपने साथ दुश्मनी की।

उम्र भर का तूने पैमाने-वफ़ा बाँधा तो क्या
उम्र को भी तो नहीं है पायदारी हाय-हाय ।[1]
ज़हर लगती है मुझे आब-ओ-हवाए-ज़िन्दगी
यानी तुझसे थी उसे नासाज़गारी हाय-हाय ।[2]
गुलफ़िशानीहाय नाज़े-जलवा को क्या हो गया
ख़ाक पर होती है तेरी लालाकारी हाय ।[3]
शर्मे-रुसवाई से जा छिपना नक़ाबे-ख़ाक में
ख़त्म है उलफ़त की तुझपर पर्दादारी हाय-हाय ।[4]
ख़ाक में नामूसे-पैमाने-मुहब्बत मिल गई
उठ गई दुनिया से राह-ओ-रस्मे-यारी हाय-हाय ।[5]
हाथ ही तेग़ आज़मा का काम से जाता रहा
दिल पै एक लगने न पाया ज़ख़्मे-कारी हाय-हाय ।[6]

१—अर्थात् तूने उम्र भर मेरे साथ वफ़ादार रहने का वचन दिया परन्तु उम्र भी तो पायदार नहीं है । आज इसका प्रमाण तेरे सामने है । २—ज़िन्दगी की आब-ओ-हवा मुझे ज़हर लगती है, कारण कि यह तेरे लिये अनुकूल नहीं सिद्ध हुई । मेरे लिये अनुकूल न होती तो कोई बात नहीं थी । ३—तेरे जलवे फूल बरसाया करते थे । अब उन्हें क्या हो गया, वे क्यों उदास हो गये । अब तो तेरी ख़ाक अर्थात् क़ब्र पर फूल उगे हुए देख रहा हूँ । ४—तू बदनामी की शर्म से मिट्टी की नक़ाब में छिप गया । इस प्रकार तूने उलफ़त की पर्दादारी ख़त्म कर दी । ऐसा पर्दा तो दूसरा कोई भी न करता । ५—प्रेम निभाने के वचन की इज़्ज़त मिट्टी में मिल गई क्योंकि अब तू नहीं है तो कौन अपने वचन को इस प्रकार निभायेगा । अब दुनिया से वफ़ादारी की रस्म ही उठ गई । प्रीति निभाने वाला ऐसा कोई दूसरा न पैदा होगा । ६—तेग़ चलाने वाला (तेरा) हाथ ही काम न कर सका और मेरे घायल होने की इच्छा मन की मन ही में रह गई ।

किस तरह काटे कोई शबहाए तारे-बर्शगाल
है नज़र ख़ूकर्दए अख़्तर-शुमारी हाय-हाय ।[1]
गोशे-महजूरे-पयाम - ओ - चश्मे - महरूमे - जमाल
एक दिल तिस पर ये नाउम्मीद्वारी हाय-हाय ।[2]
इश्क़ ने पकड़ा न था 'ग़ालिब' अभी वहशत का रङ्ग
रह गया था दिल में जो कुछ ज़ौक़े-ख़्वारी हाय-हाय ।[3]

(७६)

इश्क़ मुझको नहीं वहशत ही सही
मेरी वहशत तेरी शोहरत ही सही ।[4]
क़तअ[5] कीजे न तअल्लुक़ हमसे
कुछ नहीं है तो अदावत[6] ही सही ।

१—शब हाय तारे-बर्शगाल, अर्थात् बरसात की काली रातें कैसे काटें क्योंकि आँखों को तो अख़्तर शुमारी (तारे गिनने) की आदत है । २—गोशे-महजूरे-पयाम अर्थात् कान संदेश सुनने को तरसते हैं और चश्मे महरूमे-जमाल अर्थात् आँख रूप देखने से वंचित है । केवल एक ही हसरत है और इतनी निराशाएँ हैं । ३—प्रेम ने अभी वहशत या पागल पन का रंग नहीं पकड़ा था । प्रेम में और अधिक बरबाद होने का चाव रह ही गया । ४—प्रिय के यह कहने पर कि तुम्हें मुझसे इश्क़ नहीं, वहशत और पागलपन है, प्रेमी कहता है, चलो पागलपन ही सही, पर तुझे तो ख़ुश होना चाहिये क्योंकि मेरे पागलपन से तेरा नाम होता है, तेरी ख्याति (शोहरत) बढ़ती है । ५—काटना । ६—वैर । कहते है अपना सम्बन्ध मुझसे बिलकुल ही न तोड़ दो । यदि प्रेम नहीं तो वैर ही सही, कुछ सम्बन्ध अवश्य रखो ।

मेरे होने में है क्या रुसवाई
ए वो मजलिस नहीं खलवत[1] ही सही।
हम भी दुश्मन तो नहीं हैं अपने
ग़ैर को तुझसे मुहब्बत ही सही।
अपनी हस्ती ही से हो जो कुछ हो
आगही गर नहीं ग़फ़लत ही सही।[2]
उम्र हर चन्द कि है बर्क़-ख़राम
दिल के ख़ूँ करने की फ़ुरसत ही सही।[3]
हम कोई तर्के-वफ़ा करते हैं
न सही इश्क़ मुसीबत ही सही।[4]
कुछ तो दे ए फ़लके-ना-इन्साफ
आह-ओ-फ़रियाद की रुख़सत ही सही।[5]

१—एकान्त। कहते हैं मेरे होने में बदनामी क्या है। यदि तुम सभा (मजलिस) में नहीं मिलते तो एकान्त में ही मिलो। वैसे बदनामी तो सब के सामने भी मिलने में नहीं है परन्तु एकान्त में मिलने से तो बदनामी की ज़रा भी आशंका नहीं रहेगी। २—आगही अर्थात् आगाही (ज्ञान)। हम क्या हैं, यदि हम इस तथ्य को नहीं जान सकते तो अपनी हस्ती को भूल ही जाओ। इस प्रकार अपनी हस्ती का ज्ञान आप ही आप प्राप्त हो जायगा। ३—यद्यपि उम्र बिजली की सी तीव्र गति से बीत रही है परन्तु प्रेम के दुख में दिल का ख़ून कर देने के लिये यह समय बहुत काफ़ी है। ४—तुम हमें वफ़ा को त्यागने का दोषी ठहराते हो और कहते हो हम प्रेम नहीं करते। यही सही, तुम समझ लो कि हम एक मुसीबत झेल रहे हैं, अब दया करो। इसका दूसरा सादा अर्थ यह है हम प्रीति का मार्ग न छोड़ेंगे चाहे प्रिय कितने ही ज़ुल्म करे। समझ लेंगे कि यह इश्क़ नहीं एक मुसीबत है। ५—अन्यायी आकाश से कहते हैं कि और कुछ नहीं देता तो आह और फ़रियाद करने की इजाज़त ही दे दे जिसमें कि हम जी भर कर रो धो लें।

हम भी तसलीम की ख़ू डालेंगे
बेनियाज़ी तेरी आदत ही सही।[1]
यार से छेड़ चली जाय 'असद'
गर नहीं वस्ल तो हसरत ही सही।

(७७)

ढूँढे है उस मुग़न्निये आतिश-नफ़स को जी
जिसकी सदा हो जलवए-बर्क़े-फ़ना मुझे।[2]
मस्ताना तय करूँ हूँ रहे वादिये-ख़याल
ता बाज़गश्त से न रहे मुद्दआ मुझे।[3]
करता है बस कि बाग़ में तू बे हिजाबियाँ
आने लगी है नकहते-गुल से हया मुझे।[4]

१—हम भी अब यह आदत डाल लेंगे कि तेरी इच्छा पर चलें। तू अपनी उपेक्षा की आदत न छोड़ेगा न सही, जब हम में भी सहन शीलता आ जायगी तब तेरी यह उपेक्षा भी हमें अच्छी लगेगी। २—मुग़न्नी गायक को कहते हैं और आतिश-नफ़स का शाब्दिक अर्थ तो होगा आग की लौ परन्तु यहाँ इसका अर्थ है वह गायक जिसके स्वर में आग भरी हो। कहते हैं मेरे कान ऐसे गायक को सुनना चाहते हैं जिसकी आवाज़ में आग भरी हो और जो मौत की बिजली (बर्क़े-फ़ना) गिरा कर मुझे मार डाले अर्थात् मैं अपने को भूल जाऊँ। ३—रहे वादिये-ख्याल = विचारों के मार्ग की घाटी। बाज़गश्त = प्रति ध्वनि। मुद्दआ = मतलब। अपने विचारों के मैदान में मस्तों की तरह तेज़ चाल से चला जा रहा हूँ। इतनी तेज़ी से कि अपने पद-चाप की प्रतिध्वनि भी न सुनाई पड़े। ४—तू बाग़ में फूलों के रूप में अपना जलवा दिखाता है। यह बेहिजाबी (बे पर्दा होना) है। पहले मैं फूलों की सुगन्ध (नकहते-गुल) को कहा करता था कि वह बेहिजाब होकर इधर उधर फिरती है परन्तु अब तुझे फूलों के रूप में देख कर मैं सुगन्ध पर आरोप लगाने पर लज्जित हूँ।

खुलता किसी पै क्यों मेरे दिल का मुआमला
शेरों के इन्तख़ाब ने रुसवा किया मुझे।[1]

(७८)

उस बज़्म में मुझे नहीं बनती हया किये
बैठा रहा अगरचे इशारे हुआ किये[2]
दिल ही तो है सियासते-दरबाँ से डर गया
मैं और जाऊँ दर से तेरे बिन सदा किये ![3]
बे सर्फ़ा ही गुज़रती है हो गरचे उम्रे-ख़िज्र
हज़रत भी कल कहेंगे कि हम क्या किया किये ।[4]

१—इन्तख़ाब = चुनाव । मैंने सभा में पढ़ने के लिये अपने जो शेर चुने उन्हें सुन लोगों ने मेरे मन की बात जान ली और मैं रुसवा (बदनाम) हो गया । २—कहते हैं प्रिय की महफ़िल में बे शर्मी से बैठा रहा यद्यपि लोग इशारे करते रहे, आवाज़ें कसते रहे । मैं क्या करूँ, वहाँ न जाऊँ, यह मेरे बस की बात नहीं और जाता हूँ तो आत्म-सम्मान ('हया' शब्द यहाँ इसी अर्थ में आया है) की रक्षा नहीं हो सकती । ३—दरबान की धमकियों और घुड़कियों से डर गया, नहीं तो भला मैं बिना पुकारे तेरे द्वार से लौट आऊँ । ४—बेसर्फ़ा = बे फ़ायदा । ख़िज्र एक पैग़म्बर थे जिन्हें जङ्गल और नदियों का मालिक कहा जाता है । वे भूलों भटकों को राह बताते हैं इसलिये 'ख़िज्र' शब्द का अर्थ 'पथ प्रदर्शक' भी माना जाता है । उनकी आयु बहुत लम्बी थी । ग़ालिब कहते हैं कि सांसारिक झंझटों में ही उम्र बीत जाती है और इससे वह लाभ नहीं होता जो अपने को पहचानने में समय लगाने में होना चाहिये । ख़िज्र की भांति लम्बी उम्र भी इस प्रकार बे फ़ायदा ही होगी । ख़िज्र से पूछा जाय तो वे भी यह नहीं बता सकेंगे कि हमने इस उद्देश्य पर कहाँ तक ध्यान दिया।

मक़दूर[1] हो तो ख़ाक से पूछूँ कि ओ लईम[2]
तूने वो गञ्जहाय-गरां-माया[3] क्या किये ?
किस रोज़ तोहमतें न तराशा किये उदू ?
किस दिन हमारे सर पै न आरे चला किये ।
ज़िद की है और बात मगर ख़ू बुरी नहीं
भूले से उसने सैकड़ों वादे वफ़ा किये ।
'ग़ालिब' तुम्हीं कहो कि मिलेगा जवाब क्या
माना कि तुम कहा किये और वो सुना किये ।

(७९)

ज़िन्दगी अपनी जब इस शक्ल से गुज़री 'ग़ालिब'
हम भी क्या याद करेंगे कि ख़ुदा रखते थे ।

(८०)

देखना क़िस्मत कि आप अपने पै रश्क[4] आ जाय है
मैं उसे देखूं, भला कब मुझसे देखा जाय है ।
हाथ धो दिल से यही गर्मी गर अन्देशे[5] में है
आबगीना[6] तुन्दिये-सहबा[7] से पिघला जाय है ।

१—सामर्थ्य । २—कृपण । ३—बड़े बड़े ख़ाज़ाने (मतलब बड़े व्यक्तित्व के हैं ।) ४—ईर्ष्या । जब उसके दर्शन हुए तो अपने आपसे ईर्ष्या होने लगी और उसके दर्शनों का आनन्द न प्राप्त हो सका । अपने को भी ग़ैर समझ लेना अतिशयोक्ति की चरम सीमा है । ५—विचार । ६—शीशे का प्याला । ७—शराब की गर्मी । प्रेम के विचार इतने गर्म हैं तो दिल से हाथ धोना ही पड़ेगा । दूसरी पंक्ति में शीशा दिल को कहा गया है और प्रेम के विचारों की गर्मी को तुन्दिये-शराब कहा है । अर्थात दिल का शीशा विचारों की गर्मी से पिघला जा रहा है ।

POONA 5.

ग़ैर को यारब ! वो क्यों कर मनए-गुस्ताख़ी करे
गर हया भी उसको आती है तो शर्मा जाय है।[1]

शौक़ को ये लत कि हर दम नाला खींचे[2] जाइये
दिल की वो हालत कि दम लेने से घबरा जाय है।

दूर चश्मे-बद ! तेरी बज़्मे-तरब से वाह वा !
नग़मा हो जाता है वाँ गर नाला मेरा जाय है।[3]

गरचे है तर्ज़े-तग़ाफ़ुल पर्दा दारे-राज़े-इश्क
पर हम ऐसे खोए जाते हैं कि वो पा जाय है।[4]

उसकी बज़्म आराइयाँ[5] सुनकर दिले-रंजूर[6] यां !
मिस्ले-नक़्शे-मुद्दआए-ग़ैर[7] बैठा जाय है।

---

१ – दूसरी पंक्ति में हया और शर्म दोनों एक ही अर्थ वाले शब्द लाकर और उनको सार्थक करके शायर ने कमाल कर दिया है। जो बात कही है वह भी स्वाभाविक है। २—नाला खींचना = रुदन करना। ३—चश्मे-बद = बुरी नज़र। बज़्मे-तरब = .खुशी की महफ़िल। कहते हैं तेरी खुशी की महफ़िल का क्या कहना ! वहाँ तो मेरा रुदन भी गीत बन जाता है। ईश्वर उसे बुरी नज़र से बचाये। मतलब यह है कि मेरा रुदन सुन कर तू खुश होता है। ४—तर्ज़े-तग़ाफ़ुल = उपेक्षा का ढङ्ग। कहते हैं हम प्रेम के भेद को अनजान बन कर छिपाते रहते हैं परन्तु कभी कभी उसके प्रेम में व्याकुल हो ऐसे लीन हो जाते हैं कि वह इस भेद को पा जाता है। ५—महफ़िल सजाने का हाल। ६—दुखी हृदय। ७—ग़ैर के प्रेम की छाप के समान। मेरा दुखी हृदय यह सुन कर कि आज उसने फिर महफ़िल सजाई है, उसी प्रकार बैठा जा रहा है जैसे उसके हृदय पर दूसरे के प्रेम की छाप बैठी है।

होके आशिक़ वह परी रुख़ और नाज़ुक बन गया
रङ्ग खिलता जाय है जितना कि उड़ता जाय है।

नक़्श[1] को उसके मुसव्विर पर भी क्या क्या नाज़ हैं
खींचता है जिस क़दर उतना ही खिंचता जाय है

साया मेरा मुझसे मिस्ले-दूद[2] भागे है 'असद'
पास मुझ आतिश बजाँ[3] के किस से ठहरा जाय है।

(८१)

उग रहा है दर-ओ-दीवार से सब्ज़ा 'ग़ालिब'
हम बियाबाँ में हैं और घर में बहार आई है।[4]

(८२)

सादगी पर उसकी मर जाने की हसरत दिल में है
बस नहीं चलता कि फिर ख़ञ्जर कफ़े-क़ातिल[5] में है।

१—चित्र। २—धुएँ की तरह। ३—जिसके तन में आग भड़कती हो। मेरे शरीर में प्रेम की आग ऐसी भड़की है कि उसकी आँच से मेरी परछाईं भी मुझसे भागती है। ४— हम प्रेम में पागल होकर जंगल में घूम रहे हैं यद्यपि घर में भी हमारे न रहने से दर-ओ-दीवार पर घास उग आई होगी और वही जंगल बन गया होगा। ५—क़ातिल के हाथ। हम तो उसकी सादगी ही पर जान दे देना चाहते हैं परन्तु वह बार बार यह सादगी छोड़ कर खंजर हाथ में ले लेता है और हमारे दिल में उसकी सादगी पर मर मिटने की हसरत ही रह जाती है।

देखना तक़रीर[1] की लज़्ज़त कि जो उसने कहा
मैंने यह जाना कि गोया यह भी मेरे दिल में है।
गरचे है किस किस बुराई से वले बाई-हमा[2]
ज़िक्र मेरा मुझसे बेहतर है कि उस महफ़िल में है।
है दिले शोरीदए-'ग़ालिब' तिलिस्मे पेच ओ-ताब
रहम कर अपनी तमन्ना पर कि किस मुश्किल में है।[3]

(८३)

दिल से तेरी निगाह जिगर तक उतर गई
दोनों को एक अदा में रज़ामन्द[4] कर गई।
शक़[5] हो गया है सीना ख़ुशा लज़्ज़ते-फ़िराक़[6]
तकलीफ़े-पर्दादारिये-ज़ख्मे-जिगर गई।

१—भाषण। इससे बढ़ कर किसी की बातों की क्या तारीफ़ हो सकती है कि जो कुछ वह कहे उसे सुनने वाला यह समझे कि यही मेरे मन में भी था। २—इसके बावजूद। कहते हैं, यद्यपि उसकी महफ़िल में मेरी बुराई ही बुराई होती है परन्तु फिर भी मेरी चर्चा मुझसे अच्छी है कि उसकी महफ़िल में उसकी पहुँच तो है। ३—ग़ालिब का पागल हृदय इतना व्याकुल है कि उसके पेच ताब के तिलिस्म में तेरी तमन्ना क़ैद होकर रह गई है, उसे निकलने का कोई रास्ता ही नहीं मिलता। इस पर दया कर और इसे इस मुश्किल से निकाल। ये तेरी ही तमन्ना है। अपनों पर तो सभी तरस खाते हैं। ४—'रज़ामन्द कर गई, का यहाँ अर्थ है दोनों मोहित हो गए। ५—फटगया। ६—विरह का मज़ा। तेरे विरह का मज़ा कितना अच्छा है कि उससे मेरा सीना फट गया और अब जिगर के घाव को छिपाने की तक़लीफ न करनी पड़ेगी।

उड़ती फिरे है ख़ाक मेरी कूए यार में
बारे, अब ए हवा हविसे-बाल-ओ-पर गई।[1]
हर बुलहवस ने हुस्न-परस्ती शआर की
अब आबरूए-शेवए-अहले नज़र गई।[2]
नज़्ज़ारा[3] ने भी काम किया वाँ नक़ाब का
मस्ती से हर निगह तेरे रुख़ पर बिखर गई।
मारा ज़माने ने 'असदुल्लाह ख़ाँ' तुम्हें
वह वलवले कहाँ वो जवानी किधर गई।

(८४)

तसकीं को हम न रोएं जो ज़ौक़े नज़र[4] मिले
हूराने-ख़ुल्द में तेरी सूरत अगर मिले।

१—मेरी ख़ाक अब यार के कूचे में उड़ रही है। हवा से कहते हैं, अच्छा है कि अब मुझे पर और बाल की इच्छा नहीं रही क्यों कि धूल को उड़ने में इनकी आवश्यकता नहीं है। २—बुलहवस = वासना रखने वाला। हुस्न परस्ती शआर को = सौंदर्योपासना को आदत बना लिया। अब उन लोगों की आबरू गई जो सौंदर्य की परख करते थे और सच्चा प्रेम करते थे, क्योंकि अब उन्हें भी झूठा समझा जाने लगा है। ३—दर्शन। इस शेर का मतलब है कि तुझे सब लोग देखकर इतने मस्त होगए कि दर्शन न कर सके। निगाहों के तार बिखर बिखर कर नक़ाब बन गए। ४—ज़ौक़े-नज़र से यहाँ मतलब है निगाहों को आनन्द प्राप्त हो। कहते हैं हम अपने मनकी सान्त्वना के लिये रोते हैं क्योंकि तू कहीं दिखाई नहीं पड़ा। शायद ख़ुल्द (स्वर्ग) में कोई हूर तेरी सूरत वाली मिल जाय पर यहाँ तो कोई आशा नहीं।

वह बादए शबाना[1] की सरगर्मियाँ कहाँ
उठिये बस अब कि लज़्ज़ते-ख़्वाबे सहर[2] गई।
अपनी गली में मुझको न कर दफ़्न बादे-क़त्ल
मेरे पते से ख़ल्क़[3] को क्यों तेरा घर मिले।
साक़ी-गरी की शर्म करो आज वरना हम
हर शब पिया ही करते हैं मय जिस कदर मिले[4]
तुझसे तो कुछ कलाम नहीं लेकिन ए नदीम[5]
मेरा सलाम कहियो अगर नामाबर मिले।
तुमको भी हम दिखाएंगे मजनूं ने क्या किया
फ़ुरसत कशाकशे-ग़मे-पिनहाँ से गर मिले।[6]
लाज़िम नहीं कि ख़िज़्र की हम पैरवी करें
माना कि एक बुज़ुर्ग हमें हमसफ़र मिले।[7]

१—जवानी की शराब। २—सुबह की नींद का मज़ा। ३—सर्व साधारण। ४—वैसे तो हम रोज़ ही रात में जितनी मिल जाय पी लिया करते हैं पर आज तुम साक़ी हो इसलिये अधिक पिलाकर अपने साक़ी बनने की लाज रख लो। ५—साथी (नदीम) से कहते हैं कि मुझे तुझसे कुछ नहीं कहना है लेकिन यदि नामाबर (पत्र वाहक) मिल जाय तो उससे मेरा सलाम कह देना। इसमें उसकी बेपरवाही की शिकायत भी है और याद दिलाने की बात भी कि वह पत्र का उत्तर नहीं लाया। ६—हम अपनी व्यथा को छिपाये रखना चाहते हैं परन्तु वह सब पर प्रकट होने के लिये व्याकुल है। इस खींचातानी से फ़ुरसत मिल जाय तब हमारा प्रेम में पागल पन देखना। हम भी मजनूँ की याद ताज़ा करदेंगे। ७—ख़िज्र का अनुकरण हमारे लिये ज़रूरी नहीं हम प्रेम में अपने को उनसे कम नहीं मानते, उन्हें यात्रा में एक अच्छा साथी भर मानते हैं।

ए साकिनाने-कूचए-दिलदार[1] देखना
तुमको कहीं जो 'ग़ालिबे'-आशुफ़्ता सर[2] मिले।

(८५)

कोई दिन गर ज़िन्दगानी और है
अपने जी में हमने ठानी और है।
आतिशें-दोज़ख़ में ये गर्मी कहाँ
सोज़े-ग़महाए-निहानी[3] और है।
बारहा देखी हैं उनकी रंजिशें
पर कुछ अब के सर गरानी[4] और है।
देके ख़त मुंह देखता है नामाबर[5]
कुछ तो पैग़ामे-ज़बानी और है।
हो चुकीं 'ग़ालिब' बलाएं सब तमाम
एक मर्गे-नागहानी और है।[6]

(८६)

कोई उम्मीद बर नहीं आती[7]
कोई सूरत[8] नज़र नहीं आती।
मौत का एक दिन मुऐयन[9] है
नींद क्यों रात भर नहीं आती।

१—दिलदार के कूचे के निवासियों से कहते हैं कि ग़ालिब कहीं मिल जाय तो उसका प्रेम में पागल होना देखना। वैसे तो तुम भी अपने को उसके प्रेम में व्याकुल कहते हो परन्तु उसे देखोगे तब तुम्हें उसकी महानता का अनुभव होगा। २—परेशान, पामल। ३—अन्तर वेदना की जलन। ४—नाराज़ी। ५—पत्र वाहक। ६—जितनी बलाएँ (विपदाएँ) मुझ पर आनी थीं वे सब तो आ चुकीं अब केवल मर्गे-नागहानी (अचानक मौत) और बाक़ी रह गई है। ७—पूरी नहीं होती। ८—उपाय। ९—निश्चित।

आगे आती थी हाले-दिल पै हँसी
अब किसी बात पर नहीं आती।
जानता हूँ सवाबे-ताअत-ओ-जोहद[1]
पर तबीअत इधर नहीं आती।
है कुछ ऐसी ही बात जो चुप हूँ
वरना क्या बात कर नहीं[2] आती।
क्यों न चीख़ूँ कि याद करते हैं
मेरी आवाज़ गर नहीं आती।[3]
दाग़े-दिल गर नज़र नहीं आता
बू भी ए चारा गर नहीं आती ?[4]
हम वहां हैं जहाँ से हमको भी
आप अपनी ख़बर नहीं आती।
मरते हैं आरज़ू में मरने की
मौत आती है पर नहीं आती।
काबे किस मुंह से जाओगे 'ग़ालिब'
शर्म तुमको मगर[5] नहीं आती।

(८७)

दिले-नादां तुझे हुआ क्या है
आख़िर इस दर्द की दवा क्या है ?

१—ईश्वर की आज्ञाओं और धर्म कर्म का पुण्य। २—कर नहीं आती अर्थात करना नहीं आती। ३—मैं इसलिये चीखकर फ़रियाद करता हूँ कि जब मैं चुप हो जाता हूँ तो वे चकित हो मुझे याद करने लगते हैं। ४—चारागर अर्थात चिकित्सक से कहते हैं कि मुझे अपने दिल का दाग़ नहीं नज़र आता तो क्या मुझे हृदय के जलने से उत्पन्न होने वाली गंध भी नहीं आती। ५—मगर अर्थात शायद।

हम हैं मुशताक़[1] और वह बेज़ार[2]
या इलाही ये माजरा क्या है ?
मैं भी मुंह में ज़बान रखता हूँ
काश पूछो कि मुद्दआ[3] क्या है ?
जब कि तुझ बिन नहीं कोई मौजूद
फिर ये हङ्गामा ए ख़ुदा क्या है ?
ये परी चेहरा लोग कैसे हैं ?
ग़मज़-ओ-इशवा[4]-ओ अदा क्या है ?
शिकने-ज़ुल्फ़े अंबरीं[5] क्यों है ?
निगहे-चश्मे-सुर्मा सा क्या है ?
सब्ज़ा ओ गुल कहां से आये हैं ?
अब्र क्या चीज़ है हवा क्या है ?
हमको उनसे वफ़ा की है उम्मीद
जो नहीं जानते वफ़ा क्या है ?
हाँ भला कर तेरा भला होगा
और दरवेश[6] की सदा क्या है ?

(८७)

न हुई गर मेरे मरने से तसल्ली न सही
इम्तहां और भी बाक़ी हो तो ये भी न सही।
मय परस्तां! ख़ुमे-मय मुंह से लगाए ही बनी
एक दिन गर न हुआ बज़्म में साक़ी न सही।[7]

१—इच्छुक। २—विरक्त। ३—अभिप्राय। ४—नाज़ ओ-अदा। ५—सुगंधित केशों के पेच। ६—फ़क़ीर। ७—शराबियों से कहते हैं कि साक़ी नहीं है तो आज शराब का मटका ही मुँह से लगा लो।

एक हङ्गामे पै मौक़ूफ़ है घर की रौनक़
नौहए ग़म ही सही नग़मए-शादी न सही।[1]
न सताइश की तमन्ना न सिले की परवा
गर नहीं हैं मेरे अशआर में मानी न सही।[2]
इशरते-सोहबते-ख़ूबां ही ग़नीमत समझो
न हुई 'ग़ालिब' अगर उम्रे-तबीई न सही।[3]

(८८)

अजब निशात[4] से जल्लाद के चले हैं हम आगे
कि अपना साया सर पांव से है दो क़दम आगे।
क़ज़ा ने था मुझे चाहा ख़राबे-बादए उलफ़त
फ़क़त "ख़राब" लिखा, बस न चल सका क़लम आगे।[5]

१—कोई न कोई हंगामा (चहल पहल) होना चाहिये चाहे वह शादी का हो या मातम का। दोनों में लोग इकट्ठे होकर घर की रौनक़ बढ़ा देते हैं। २—ग़ालिब के समय में उनकी शायरी को कुछ लोग अर्थ हीन और कठिन कहा करते थे, ऐसे लोगों को सम्बोधित कर कहते हैं कि मुझे न पुरस्कार की परवाह है न किसी बदले की इसलिये जिनको मेरे शेर में कोई अर्थ नहीं सूझता, न सूझे। ३—आनन्द की घड़ी जल्दी बीत जाती है इसलिये सुन्दरियों के साथ बीतने वाले कुछ क्षणों को ही बहुत जानो, यदि, पूरी आयु (उम्रे-तबीई = प्राकृतिक आयु) न मिलो तो उसका रंज न करो। ४—प्रसन्नता। ५—'क़ज़ा' शब्द का अर्थ है मृत्यु परन्तु यहाँ उस फ़रिश्ते के लिये प्रयुक्त हुआ है जो भाग्य लिखता है। इस शेर का मतलब है कि उसने मेरे भाग्य में ख़राबे-बादए-उलफ़त अर्थात शराब में मस्त (ख़राब का अर्थ मस्त भी है) लिखना चाहा था परन्तु उसकी लेखनी 'ख़राब' लिखकर ही रह गई और इस प्रकार मैं मस्त न बन सका और भाग्य के लेखे के अनुसर ख़राब अर्थात बरबाद होकर ही रह गया।

ग़मे-ज़माना ने झाड़ी निशाते-इश्क़ की मस्ती
वगर न हम भी उठाते थे लज़्ज़ते-अलम आगे।[1]
ख़ुदा के वास्ते दाद इस जुनूने-शौक़ की देना
कि उसके दर पै पहुँचते हैं नामाबर से हम आगे।[2]
क़सम जनाज़े पै आने की मेरे खाते हैं 'ग़ालिब'
हमेशा खाते थे जो मेरी जान की क़सम आगे।

(८९)

शिकवे के नाम से बेमेह्र ख़फ़ा होता है
यह भी मत कह कि जो कहिये तो गिला होता है।[3]
पुर हूँ मैं शिकवे से[4] यूं राग से जैसे बाजा
एक ज़रा छेड़िये फिर देखिये क्या होता है।
गो समझता नहीं पर हुस्ने-तलाफ़ी[5] देखो
शिकवए-जौर से सर गर्मे जफ़ा होता है।

१—दुनिया के दुख ने प्रेम के सुख की मस्ती झाड़दी अर्थात् सुख का नशा उतार दिया। नहीं तो आगे अर्थात् पहले हम प्रेम की वेदना से आनन्दित होते थे। २—जुनने-शौक़ अर्थात प्रेम में उतावली की दाद चाहते हैं क्योंकि इससे बढ़कर उतावली क्या होगी कि पत्र भेज कर प्रिय के घर पत्र वाहक से पहले पहुँच जाते हैं। ३—केवल शिकायत के नाम ही से वह बेमुरव्वत ख़फ़ा होने लगता है और कहता है कि यह भी न कहो कि हम शिकायत के नाम से ख़फ़ा होते हैं क्योंकि यह भी एक शिकायत ही है। ४—पुर हूँ मैं शिकवे से अर्थात शिकायतों से भरा हूँ। ५—तलाफ़ी = पूर्ति। हुस्ने-तलाफ़ी अर्थात् अच्छी पूर्ति। यद्यपि वह अभी इतना नादान है कि कुछ समझता नहीं परन्तु इस नादानी में भी ज़ुल्म की शिकायत करने पर वह और अधिक ज़ुल्म करके अपनी शिकायत में पिछले ज़ुल्म की पूर्ति कर देता है। शेर व्यंगात्मक है।

क्यों न ठहरें हदफ़े-नावके-बेदाद कि हम
आप उठा लाते हैं गर तीर ख़ता होता है।[1]
ख़ूब था पहले से होते जो हम अपने बद ख़्वाह
कि भला चाहते और बुरा होता है।[2]
नाला जाता था परे अर्श से मेरा और अब
लब तक आता है जो ऐसा ही रसा होता है।[3]
रखियो 'ग़ालिब' मुझे इस तल्ख़-नवाई[4] से मआफ़
आज कुछ दर्द मेरे दिल में सिवा होता है।

(८६)

हर एक बात पै कहते हो तुम कि "तू क्या है?"
तुम्हीं कहो कि ये अन्दाज़े-गुफ़्तगू[5] क्या है?
न शोले में ये करशमा न बर्क़ में[6] ये अदा
कोई बताओ कि वो शोख़े-तुन्दख़ू[7] क्या है?
चिपक रहा है बदन पर लहू से पैराहन[8]
हमारी जेब को अब हाजते-रफ़ू[9] क्या है?
जला है जिस्म जहाँ दिल भी जल गया होगा
कुरेदते हो जो अब राख जुस्तजू[10] क्या है?

१—हदफ़े-नावके-बेदाद अर्थात बेदाद करने के उद्देश्य से चलाए गए तीर का निशाना। तीर ख़ता होता है=तीर निशाने से चूकता है। २—बद ख़्वाह=बुरा चाहने वाला। ३—पहले मेरी फ़रियाद आकाश से भी ऊपर पहुँच जाती थी किन्तु अब (दुर्बलता के कारण) बहुत ज़ोर लगाने पर होठों तक ही आपाती है। रसा होता है=पहुँच पाता है। ४—तल्ख़ नवाई=कटु बात कहना। सिवा=अधिक। ५—बात का ढंग। ६—बिजली। ७—तेज़ मिज़ाज वाला। ८—कुर्ता। ९—रफ़ू की आवश्यकता। १०—खोज।

रगों में दौड़ने फिरने के हम नहीं क़ायल
जब आँख ही से न टपका तो फिर लहू क्या है?
वो चीज़ जिसके लिये हमको हो बहिश्त अज़ीज़
सिवाय बादए-गुलफ़ाम-ओ-मुश्कबू क्या है?[1]
पियूँ शराब अगर ख़ुम भी देख लूँ दो चार
ये शीशा-ओ-क़दह-ओ-कूज़ा-ओ-सुबू क्या है?[2]
रही न ताक़ते-गुफ़्तार[3] और अगर हो भी
तो किस उमीद पै कहिये कि आरज़ू क्या है?
हुआ है शह का मुसाहिब फिरे है इतराता
वगर न शहर में 'ग़ालिब' की आबरू क्या[4] है?

(८७)

मैं उन्हें छेड़ूँ और कुछ न कहें
चल निकलते[5] जो मय पिये होते।
क़हर हो या बला हो, जो कुछ हो
काश के तुम मेरे लिये होते।[6]
मेरी क़िस्मत में ग़म गर इतना था
दिल भी यारब! कई दिये होते।

१—स्वर्ग हमें जिसके लिये प्रिय हो सकता है वह सिवाय 'बादए गुलफ़ाम-ओ मुश्कबू' अर्थात् लाल रंग की सुगंधित शराब के और क्या हो सकती है। २—ख़ुम=मटका। शीशा, क़दह, कूज़ा और सुबू ये सब शराब पीने के बर्तन हैं। ३—बोलने की शक्ति ४—बादशाह का मुसाहिब बनने से जो सम्मान मिला है उसी पर इतराता है नहीं तो 'ग़ालिब' को कौन जानता है। ५—चल निकलते अर्थात बिगड़ जाते, नाराज़ हो जाते। ६—काश मेरे भाग्य में तुम मेरे लिये लिख दिये गये होते, फिर [illegible] हर ज़ुल्म, हर सितम मुझे स्वीकार होता।

आही जाता वो राह पर 'ग़ालिब'
कोई दिन और भी जिये होते।

(८८)

आ! कि मेरी जान को क़रार नहीं है
ताक़ते-बेदादे-इन्तज़ार[१] नहीं है।
गिरिया[२] निकाले है तेरी बज़्म से मुझको
हाय, कि रोने पै अख़्तियार नहीं है।
क़त्ल का मेरे किया है अहद तो बारे[३]
वाय! अगर अहद उस्तवार[४] नहीं है।
देते हैं जन्नत हयाते-दह्र के बदले
नश्शा ब-अन्दाज़ए-ख़ुमार नहीं है।[५]
तूने क़सम मैकशी[६] की खाई है 'ग़ालिब'
तेरी क़सम का कुछ एतबार नहीं है।

(८९)

हुस्ने-मह गरचे ब हंगामे-कमाल अच्छा है
उससे मेरा महे ख़ुरशीदे-जमाल अच्छा है।[७]
बोसा[८] देते नहीं और दिल पै है हर लहज़ा निगाह
जी में कहते हैं कि मुफ़्त आय तो माल अच्छा है।

१—इन्तज़ार का कष्ट सहने की शक्ति नहीं है। २—रुदन। ३—प्रतिज्ञा। ४—दृढ़। अपने क़त्ल होने की ख़ुशी है, किन्तु यदि उसने अपनी प्रतिज्ञा पूरी न की तो यह दुख की बात होगी। ५—सांसारिक कष्टों के बदले में स्वर्ग का पुरस्कार बहुत बड़ा नहीं कहा जा सकता। नशा जितना टूट चुका हो उसी के अनुसार शराब पीने से तसल्ली होती है। इस शेर में जीवन को ख़ुमार और स्वर्ग को नशे की उपमा दी गई है। ६—शराब पीने। ७—पहली पंक्ति में कहते हैं कि यद्यपि चाँद का सौंदर्य उसके पूर्ण हो जाने पर अच्छा लगता है लेकिन उससे भी अच्छा मेरा प्रिय है। ख़ुरशीदे जमाल=सौंदर्य का सूर्य। ८—चुम्बन।

और बाज़ार से ले आये अगर टूट गया
साग़रे-जम से मेरा जामे-सफ़ाल अच्छा है।[१]
बे तलब दें तो मज़ा उसमें सिवा मिलता है
वह गदा,[२] जिसको न हो ख़ूए-सवाल,[३] अच्छा है।
उनके देखे से जो आजाती है मुँह पर रौनक़
वह समझते हैं कि बीमार का हाल अच्छा है।
देखिये पाते हैं उश्शाक़ बुतों से क्या फ़ैज़[४]
एक बरहमन ने कहा है कि ये साल अच्छा है।
हम सुख़न तेशे ने फ़रहाद को शीरीं से किया
जिस तरह का भी किसी में हो कमाल, अच्छा है।[५]
हमको मालूम है जन्नत की हक़ीक़त लेकिन
दिल के बहलाने को 'ग़ालिब' ये ख़याल अच्छा है।

(९०)

ग़ैर लें महफ़िल में बोसे जाम के
हम रहें यों तशना-लब पैग़ाम के।[६]

१—सम्राट जमशेद के पास एक प्याला था जिसमें सारी दुनिया के दृश्य दिखाई देते थे। परन्तु ग़ालिब कहते हैं कि मेरा मिट्टी का प्याला (जामे-सफ़ाल) उस प्याले से अच्छा है। इस शेर में सरल जीवन बिताने का आदेश दिया गयाहै। २—भिखारी। ३—सवाल करने की आदत। ४—बरहमन से मतलब ज्योतिषी है। ज्योतिषी ने बताया है कि दुनिया के लिये यह वर्ष अच्छा है। देखें इस वर्ष प्रेमियों को रूप वालों से क्या लाभ होता है। ५—फ़रहाद ने तेशा (कुदाल) चलाने में दक्षता प्राप्त करके शीरीं से बात करने का सम्मान प्राप्त कर लिया, इससे प्रकट होता है कि मेहनत मज़दूरी और मामूली हैसियत से आदमी का मान घटता नहीं। शर्त यही है कि वह अपनी कला में दक्षता प्राप्त कर ले। ६—दूसरे तो तेरी महफ़िल में शराब भी पियें और हम सन्देश के भी प्यासे रहें।

ख़स्तगी का तुम से क्या शिकवा कि यह
हथकँडे हैं चर्ख़-नीली-फ़ाम के।[१]
ख़त लिखेंगे गरचे मतलब कुछ न हो
हम तो आशिक़ हैं तुम्हारे नाम के।
रात पी ज़मज़म पै मय और सुब्ह-दम
धोए धब्बे जामए-अहराम के।[२]
दिल को आँखों ने फँसाया क्या मगर
ये भी हलक़े हैं तुम्हारे दाम के।[३]
इश्क़ ने 'ग़ालिब' निकम्मा कर दिया
वरना हम भी आदमी थे काम के।

(६१)

कब वो सुनता है कहानी मेरी
और फिर वह भी ज़बानी मेरी।
ख़लिशे-ग़मज़ए-ख़ूँरेज़[४] न पूछ
देख ख़ूँनाबा-फ़शानी[५] मेरी।

१—ख़स्तगी अर्थात अपनी परेशानी की तुमसे क्या शिकायत करें। यह तो आस्मान के हथकंडे हैं। तुम्हारा दोष नहीं। २—ज़मज़म काबे के एक कुएँ का नाम है। उसका जल बड़ा पवित्र माना जाता है और जामए अहराम उस कपड़े को कहते हैं जिसे पहन कर हज किया जाता है। कहते हैं रात ज़मज़म पर बैठ कर शराब पी और सुबह को लोगों के डर के मारे जामे पर पड़े शराब के धब्बे धो डाले। ३—हमारी आँखों ने तुम्हारा रूप देख हृदय को फँसा दिया। शायद ये भी तुम्हारे जाल के फंदे हैं। 'मगर' शब्द यहाँ 'शायद' के अर्थ में आया है। ४—तेरी क़ातिल अदा की खटक। ५—आँख से ख़ून बहाना।

क्या बयाँ करके मेरा रोएँगे
मगर, आशुफ़्ता-बयानी[१] मेरी।
मुतक़ाबिल[२] है मुक़ाबिल[३] मेरा
रुक गया, देख रवानी मेरी।
कर दिया ज़ोफ़ ने आजिज़ 'ग़ालिब'
नंगे-पीरी है जवानी मेरी।[४]

(६२)

जिस ज़ख़्म की हो सकती हो तद्बीर रफ़ू की[५]
लिख दीजियो यारब! उसे क़िस्मत में अदू की।[६]
अच्छा है सर अंगुश्ते-हिनाई का तसव्वुर
दिल में नज़र आती तो है एक बूंद लहू की।[७]
क्यों डरते हो उश्शाक़ की बे हौसलगी से
याँ तो कोई सुनता नहीं फ़रियाद किसू की।[८]

१—मेरी परेशान बातें याद करके शायद रोएँ। २—मुकाबिला न करने वाला। ३—मुकाबिला करने वाला। अर्थात मेरा प्रतिद्वन्दी आया तो था मेरा मुक़ाबिला करने किन्तु मेरी कविता का प्रवाह (रवानी) देख मुक़ाबिले से हट गया। ४—ज़ोफ़ अर्थात दुर्बलता ने इतना निर्बल बना दिया है कि मेरी जवानी को बुढ़ापे से भी शर्म आती है। ५—सिलने का उपाय। ६—दुश्मन। ७—सर अंगुश्ते-हिनाई का तसव्वुर अर्थात् मेंहदी लगी उँगली की पोर की कल्पना। मेंहदी लगने से उँगली का सिरा लाल होता है, इसलिये मन में उसकी कल्पना से रक्त की बूँद जैसी झलकती है। 'नज़र आती तो है' का अर्थ है कि आँखों से ख़ून के आँसू बहाते बहाते दिल में ख़ून बिलकुल नहीं रह गया। ८—बे हौसलगी—अधीरता। कहते हैं आशिक़ों की अधीरता से व्यर्थ ही डरते हो। यहाँ कोई उनकी फ़रियाद थोड़े ही सुनता है।

(६३)

चाहिये अच्छों को जितना चाहिये
ये अगर चाहें तो फिर क्या चाहिये।
सोहबते-रिन्दाँ से वाजिब है हज़र
जाय-मय अपने को खींचा चाहिये।[१]
चाहने को तेरे क्या समझा था दिल
बारे अब उससे भी समझा चाहिये।[२]
चाक मत कर जेब बे ऐयामे-गुल
कुछ उधर का भी इशारा चाहिये।[३]
दोस्ती का पर्दा है बेगानगी
मुँह छिपाना हमसे छोड़ा चाहिये।
दुश्मनी ने मेरी खोया ग़ैर को
किस क़द्र दुश्मन है देखा चाहिये।
मुनहसर[४] मरने पै हो जिसकी उमीद
ना उमीदी उसकी देखा चाहिये।
ग़ाफ़िल इन मह तलअतों[५] के वास्ते
चाहने वाला भी अच्छा चाहिये।
चाहते हैं खूबरूयों[६] को 'असद'
आपकी सूरत तो देखा चाहिये।

१—सोहबते-रिन्दाँ अर्थात् शराबियों की संगत से बचना (हरज़) चाहिए। जहाँ शराब हो वहाँ से अपने को खींचना (कतराना) चाहिए। २—दिल तेरे प्रेम को खेल समझा था। अब उससे भी समझा चाहिए अर्थात उसे इस खेल की सज़ा मिलनी चाहिए। ३—ऐय्यामे गुल अर्थात् फूलों की फ़सिल या वसन्त ऋतु। कहते हैं जब तक वसंत का संकेत न हो तब तक अपनी जेब मत चाक कर यानी पागल न बन। वसंत ऋतु पागल बन जाने का संकेत है। ४—निर्भर। ५—सुन्दर मुखड़े वालों। ६—सुन्दर मुखड़े वालों। ये शेर व्यंगात्मक है।

(६४)

नुक्ता-चीं[१] है ग़मे-दिल उसको सुनाये न बने
क्या बने बात जहाँ बात बनाए न बने।
मैं बुलाता तो हूँ उसको मगर ए जज़बए-दिल[२]
उस पै बन जाय कुछ ऐसी कि बिन आए न बने।
खेल समझा है कहीं छोड़ न दे, भूल न जाय
काश यूँ भी हो कि बिन मेरे सताए न बने।
ग़ैर फिरता है लिये यूँ तेरे ख़त को कि अगर
कोई पूछे कि ये क्या है तो छिपाए न बने।
इस निज़ाकत का बुरा हो वो भले हैं तो क्या
हाथ आएँ तो उन्हें हाथ लगाए न बने।
कह सके कौन कि ये जलवागरी है किस की
पर्दा छोड़ा है वो उसने कि बिन आए न बने।
मौत की राह न देखूँ कि बिन आए न रहे
तुम को चाहूँ कि न आओ तो बुलाए न बने।
बोझ वो सर से गिरा है कि उठाये न उठे
काम वो आन पड़ा है कि बनाए न बने।
इश्क़ पर ज़ोर नहीं, है ये वो आतिश 'ग़ालिब'
कि लगाए न लगे और बुझाए न बने।

१—बात की जड़ खोदने वाला या बाल की खाल निकालने वाला। २—हृदय का आकर्षण। वैसे तो उसे बुलाया ही करता हूँ, परन्तु [illegible] मेरे प्रेम के आकर्षण या प्रभाव से उस पर कुछ ऐसी बन जाये कि [illegible] आते ही बने।

(९५)

वो आके ख्वाब में तसकीने-इज़्तराब तो दे
वले मुझे तपिशे-दिल[१] मजाले-ख्वाब तो दे।
करे है क़त्ल लगावट में तेरा रो देना
तेरी तरह कोई तेग़े-निगह को आब तो दे।[२]
दिखा के जुम्बिशे-लब[३] ही तमाम कर हमको
न दे जो बोसा तो मुँह से कहीं जवाब तो दे।
पिला दे ओक[४] से साक़ी जो हमसे नफ़रत है
पियाला गर नहीं देता न दे, शराब तो दे।

(९६)

फ़रियाद की कोई लय नहीं है
नाला पाबन्दे-नय नहीं है[५]

१—दिल की जलन। कहते हैं वह (प्रिय) स्वप्न में आकर मेरे व्याकुल हृदय को अपने दर्शनों द्वारा तस्कीन तो दे सकता है लेकिन मेरे हृदय में प्रेम की जो अग्नि भड़क रही है वह मुझे नींद ही नहीं आने देती और जब नींद ही न आये तो स्वप्न कैसे दिखे (अर्थात) सारा दोष मेरे मन की जलन ही का है। २—तू जब लगावट में रो देता है तो तेरे आँसू तेरे नयन-कटारों को 'आब' दे देते हैं और उनकी तेज़ी मुझे क़त्ल कर डालती है। तलवार या ख़ंजर का पानी मुहावरा है, 'आब' का अर्थ भी पानी है। आँसू और ख़ंजर का पानी दोनों के लिये 'आब' का प्रयोग किस सुन्दरता से किया है। ३—होंठ हिलना। ४—चुल्लू। ५—दूसरी पंक्ति का अर्थ है—रुदन किसी बंसुरी का पावन्द नहीं है। मतलब यह कि फ़रियाद हो या रुदन, ये दिल से निकलना चाहिए तभी इनका प्रभाव होगा, इनके लिये किसी लय या साज़ की आवश्यकता नहीं।

क्यों बोते हैं बाग़बान तोंबे
गर बाग़ गदाए-मय नहीं है।[२]
हर चन्द हर एक शै[३] में तू है
पर तुझसी तो कोई शै नहीं है।
हाँ खाइयो मत फ़रेबे-हस्ती
हर चन्द कहें कि है, नहीं है।[४]
क्यों रद्दे-क़दह करे है ज़ाहिद
मय है ये मगस की क़ै नहीं है।[५]

(९७)

दिया है दिल अगर उसको, बशर है क्या कहिये
हुआ रक़ीब तो हो, नामाबर[६] है, क्या कहिये।
ये ज़िद कि आज न आए और आए बिन न रहे
क़ज़ा[७] से शिकवा हमें किस क़दर है क्या कहिये।

२—तोंबा भीख माँगने के काम आता है। गदाए-मय=शराब का भिखारी। ३—वस्तु। ४—जीवन के धोखे में मत आना। लोग कितना ही कहें कि है, परन्तु तुम यही समझना कि नहीं है अर्थात नश्वर है। ५—रद्दे-क़दह का अर्थ है क़दह (प्याले) को अस्वीकृत करना। ज़ाहिद से कहते हैं कि शराब पीने से क्यों इनकार करता है। यह मगस अर्थात मक्खी की क़ै (मधु) नहीं है। स्वर्ग में मधु और दूध की नहरें बहती हैं। ज़ाहिद इतनी पूजा पाठ के बदले में स्वर्ग जाने की आशा रखता है और स्वर्ग में मधुपान की भी लालसा रखता होगा इसलिये मदिरा की बुराई करने के उद्देश्य से मधु को ऐसी घृणित उपमा दी है। ६—नामाबर (पत्र वाहक) उसको पत्र देने गया और उसका रूप देखकर उसे दिल दे बैठा। अब उसे क्या कहें, आख़िर तो वह भी आदमी है और फिर बेचारा काम भी करता है। ७—मृत्यु।

जहे करिशमा कि यूँ दे रखा है हमको फ़रेब
कि बिन कहे भी उन्हें सब ख़बर, है क्या कहिये ।[१]
समझ के करते हैं बाज़ार में वो पुरसिशे-हाल
कि क है सरे-रह गुज़र है क्या कहिये ।[२]
तुम्हें नहीं है सरे-रिश्तए-वफ़ा[३] का ख़याल
हमारे हाथ में कुछ है, मगर है क्या, कहिये ?
कहा है किसने कि 'ग़ालिब' बुरा नहीं लेकिन
सिवाय इसके कि अशुफ़्ता सर[४] है क्या कहिये ।

(६८)

कभी नेकी भी उसके जी में गर आजाय है मुझसे
जफ़ाएँ करके अपनी याद शर्मा जाय है मुझसे ।[५]
ख़ुदाया जज़्बए-दिल की मगर तासीर उलटी है
कि जितना खींचता हूँ और खिंचता जाय है मुझसे ।[६]
वो बद.ख़ू और मेरी दास्ताने-इश्क़ तूलानी
इबारत मुख़्तसर क़ासिद भी घबरा जाय है मुझसे ।[७]

१–उनके इशारों की करामात तो देखिये। हमें इस धोखे में रख छोड़ा है कि हमारे बिना कहे भी उन्हें सब बातों की ख़बर है इसलिये उनसे कुछ कहते नहीं। २–बाज़ार में वे यह सोचकर हाल पूछते हैं कि यह राह चलते सबके सामने कुछ न कहेगा। ३–वफ़ा की डोर का सिरा। ४—पागल। ५—इतने ज़ुल्म कर चुका है कि यदि कभी नेकी करने का ख़याल भी आता है तो पिछली जफ़ाएँ याद करके शर्मा जाता है और सोचता है कि अब क्या भलाई करे। ६—मेरे हृदय के आकर्षण का प्रभाव भी शायद उलटा है। मैं जितना ही उसे अपनी ओर खींचता हूँ उतना ही वह मुझसे दूर खिंचता जाता है। ७—वह (प्रिय) इतने बुरे स्वभाव का है कि मेरी बात ही नहीं सुनता और मेरी प्रेम कहानी बहुत लम्बी है। क़ासिद को सुनाऊँ तो वह भी घबरा जाता है, फिर कैसे अपनी बात उस तक पहुँचाऊँ। इबारत मख़्तसर=सारांश यह कि।

उधर वो बद गुमानी है इधर ये नातवानी है
न पूछा जाय है उससे न बोला जाय है मुझसे।
सँभलने दे मुझे ए ना उमीदी क्या क़यामत है
कि दामाने-ख़याले-यार छूटा जाय है मुझसे।
हुए हैं पाँव ही पहले नबर्दे-इश्क़[१] में ज़ख़्मी
न भागा जाय है मुझसे न ठहरा जाय है मुझसे।
क़यामत है कि होवे मुद्दई[२] का हम सफ़र, 'ग़ालिब'
वो काफ़िर जो .ख़ुदा को भी न सौंपा जाय है मुझसे।[२]

(६९)

लाग़र[३] इतना हूँ कि गर तू बज़्म में जा दे[४] मुझे
मेरा ज़िम्मा देखकर गर कोई बतलादे मुझे।
क्या तअ़ज्जुब है कि उसको देखकर आजाये रहम
वाँ तलक कोई किसी हीले से पहुँचा दे मुझे।
याँ तलक मेरी गिरफ़्तारी से वो .ख़ुश है कि मैं
ज़ुल्फ़ गर बन जाऊँ तो शाने[५] में उलझा दे मुझे।

(१००)

बाज़ीचए-अतफ़ाल[६] है दुनिया मेरे आगे
होता है शब-ओ-रोज़ तमाशा मेरे आगे।

१—प्रेम-युद्ध। २—मुद्दई अर्थात रक़ीब। कहते हैं कि वह मेरे [illegible] के साथ जा रहा है। कैसे विदा करूँ, वह तो, यदि .ख़ुदा को [illegible] तब भी मुझे ईर्ष्या होगी .ख़ुदा को सौंपने से यहाँ मतलब है [illegible] के समय '.ख़ुदा हाफ़िज़' (ईश्वर रक्षक हो) कहने से। [illegible]। ४—जगह दे। ५—कंघी। .ज़ुल्फ़ से मतलब है [illegible]। ६—बच्चों का खेल।

एक खेल है औरंगे-सुलैमाँ[1] मेरे नज़दीक
एक बात है एजाज़े-मसीहा[2] मेरे आगे।

होता है निहाँ गर्द में सहरा मेरे होते
घिसता है जबीं ख़ाक पै दरिया मेरे आगे।[3]

मत पूछ कि क्या हाल है मेरा तेरे पीछे
तू देख कि क्या रंग है तेरा मेरे आगे।[4]

फिर देखिये अन्दाज़े-गुल अफ़शानिये-गुफ़्तार
रख दीजिये पैमानए-सहबा मेरे आगे।[5]

नफ़रत का गुमाँ गुज़रे है मैं रश्क से गुज़रा
क्योंकर कहूँ लो नाम न उनका मेरे आगे।[6]

ईमाँ मुझे रोके है तो खींचे है मुझे कुफ़्र
काबा मेरे पीछे है कलीसा[7] मेरे आगे।

१—सुलैमान (महान सम्राट) का राज्य। २—ईसा मसीह का चमत्कार। ३—प्रेम में मेरा पागलपन इतनी धूल उड़ा रहा है कि सहरा उसमें छिप जाता है और मैं ऐसा तूफ़ान हूँ या मेरे आँसुओं से वह बाढ़ आती है कि नदी भी मेरी महानता स्वीकार कर मेरे सामने सिर झुकाती है। ४—तेरे वियोग में मेरा क्या हाल हो जाता है इसको मत पूछ। वह देख कि मेरे सामने तेरा क्या रंग हो जाता है, तू कितना परेशान हो जाता है। ५—अंदाज़े-गुल-अफ़शानिये गुफ़्तार = बोलते समय मुँह से फूल झड़ने का अन्दाज़। पैमानए-सहबा = शराब का प्याला। ६—मैं ईर्ष्यावश चाहता हूँ कि मेरे सामने कोई उसका नाम न ले किन्तु लोग समझने लगे हैं कि मैं उसके नाम से नफ़रत करता हूँ। इसी लिये मैंने ईर्ष्या छोड़ दी है और किसी के मुँह से उसका नाम सुन कुछ नहीं कहता। ७—गिरजा।

आशिक़ हूँ पै माशूक़ फ़रेबी है मेरा काम
मजनूँ को बुरा कहती है लैला मेरे आगे।[1]

ख़ुश होते हैं पर वस्ल में यूँ मर नहीं जाते
आई शबे-हिजराँ की तमन्ना मेरे आगे।[2]

है मौजज़न एक क़ुलज़ुमे-ख़ूँ काश यही हो
आता है अभी देखिए क्या क्या मेरे आगे।[3]

गो हाथ को जुम्बिश नहीं आँखों में तो दम है
रहने दो अभी साग़र-ओ-मीना मेरे आगे।[4]

हम पेशा-ओ-हम मशरब-ओ-हमराज़ है मेरा
'ग़ालिब' को बुरा क्यों कहो अच्छा मेरे आगे।[5]

१—मुझे माशूक़ को धोखा देना खूब आता है। मैं ऐसा धोखा देता हूँ कि लैला मजनूँ को छोड़ मेरी तारीफ़ करने लगती है और उसे बुरा कहने लगती है। २—प्रिय-मिलन से सभी को प्रसन्नता होती है किन्तु कोई हर्ष से मर नहीं जाता। परन्तु मुझे इतना हर्ष हुआ कि मैं मर ही गया। शायद यह मेरी उन तमन्नाओं का प्रभाव है जो मैं विरह की रातों में मौत के लिये किया करता था। ३—मेरे ख़ून के आँसू रोने से एक रक्त सागर हिलोरें ले रहा है। काश! मेरी मुसीबत यहीं खतम हो जाय, परन्तु आशा नहीं है, अभी और देखें क्या क्या आगे आता है। ४—यह 'ग़ालिब' के सर्व श्रेष्ठ शेरों में से एक शेर है। मरते समय का चित्र है। हाथ हिल नहीं सकते परन्तु आँखों में दम है। छू नहीं सकते पर देख सकते हैं इस लिये मेरी प्यारी सुराही और प्याले को सामने रहने दो। ५—दूसरी पंक्ति में 'अच्छा' शब्द इस अर्थ में आया है जैसे कहा जाय 'अच्छा यह बात मत करो' कहते हैं 'ग़ालिब' मेरे ही पेशे, मेरे ही धर्म का है और मेरा भेदी मित्र है।

(१०१)

कहूँ जो हाल तो कहते हो मुद्दश्रा[१] कहिये
तुम्हीं कहो कि जो तुम यूँ कहो तो क्या कहिये।

न कहियो तश्रन से फिर तुम कि हम सितमगर हैं
मुझे तो खू है कि जो कुछ कहो बजा कहिये।[२]

वो नेशतर सही पर दिल में जब उतर जाए
निगाहे-नाज़ को फिर क्यों न आशना कहिये।[३]

जो मुद्दई[४] बने उसके न मुद्दई बनिये
जो नासज़ा[५] कहे उसको न नासज़ा कहिये।

कहीं हक़ीक़ते-जाँ-काहिये-मरज़[६] लिखिये
कहीं मुसीबते-नासाज़िये-दवा[७] कहिये।

कभी शिकायते-रंजे-गराँ-नशीं कीजे
कभी हिकायते-सब्रे-गुरेज़ पा कहिये।[८]

१—अभिप्राय। २—तश्रन अर्थात व्यंग से भी अपने को सितमगर मत कहना, नहीं तो मेरी तो आदत है कि तुम जो कुछ कहोगे उसे कह दूँगा कि ठीक कहते हो। ३—नेशतर अर्थात नशतर। प्रिय की निगाह नशतर सही पर जब हृदय में घर कर जाय तब उसे परिचित या मित्र ही कहना चाहिये और मित्र का स्थान हृदय में ही होता है। ४—दुशमन। ५—नालायक़। ६—रोग के कष्ट का हाल। ७—दवा के ठीक न होने की मुसीबत या कठिनाई। ८—गराँनशीन = जो इस तरह बैठ जाय कि उसे उठाया न जा सके। हिकायते-सब्रे-गुरेज़ पा = भागने वाले सब्र की कहानी।

रहे न जान तो क़ातिल को ख़ूँ बहा दीजे
कटे ज़बान तो ख़ंजर को मरहबा कहिये।[१]

नहीं निगार[२] को उलफ़त, न हो, निगार तो है
रवानि-ओ-रविश-ओ-मस्ति-ओ-अदा कहिये।

सफ़ीना[३] जब कि किनारे पै आलगा 'ग़ालिब'
ख़ुदा से क्या सितम-ओ-जौरे-नाख़ुदा[४] कहिये।

(१०२)

इब्ने-मरियम[५] हुआ करे कोई
मेरे दुख की दवा करे कोई।

चाल जैसे कड़ी कमान का तीर
दिल में ऐसे के जा करे कोई[६]

बात पर वाँ ज़बान कटती है
वो कहें और सुना करे कोई।

बक रहा हूँ जुनूँ में क्या क्या कुछ
कुछ न समझे ख़ुदा करे कोई।

न सुनो गर बुरा कहे कोई
न कहो गर बुरा करे कोई।

१—[illegible] में इस प्रकार जीवन बिताना चाहिये कि जब क़त्ल कर [illegible] क़ातिल को ख़ून का बदला (जो क़ातिल देता है) दे और [illegible] ख़ंजर को शाबाश कहे। २—प्रिय। प्रिय को प्रेम [illegible] है। उसी की चाल ढाल, रङ्ग ढङ्ग, मस्ती और अदा [illegible]। ३—नाव। ४—मल्लाह, नाविक। ५—मरियम के [illegible]। ६—[illegible] तीव्र गामी के मन में किसी के लिये क्या [illegible] है।

[illegible] COLLEGE POONA 6.

कौन है, जो नहीं है हाजत मन्द[1]
किसकी हाजत रवा करे कोई।

रोक लो गर ग़लत चले कोई
बख़्श दो गर ख़ता करे कोई।

क्या किया ख़िज़्र ने सिकन्दर से
अब किसे रहनुमा करे कोई।[2]

जब तवक़्क़ा[3] ही उठ गई 'ग़ालिब'
क्यों किसी का गिला करे कोई।

(१०३)

हज़ारों ख़्वाहिशें ऐसी कि हर ख़्वाहिश पै दम निकले
बहुत निकले मेरे अरमान लेकिन फिर भी कम निकले।

डरे क्यों मेरा क़ातिल क्या रहेगा उसकी गर्दन पर
वो ख़ूँ जो चश्मे-तर से उम्र भर यूँ दम-ब-दम निकले।[4]

निकलना ख़ुल्द से आदम का सुनते आए थे लेकिन[5]
बहुत बे आबरू होकर तेरे कूचे से हम निकले।

१—ज़रूरत मन्द। २—ख़िज़्र सिकन्दर को आबे-हयात या अमृत के स्रोत पर ले गये। स्वयं अमृत पी लिया और सिकन्दर को उन लोगों के सामने ले गये जिन्होंने अमृत पी लिया था और बुढ़ापे तथा दुर्बलता के कारण जिनका बुरा हाल था। सिकन्दर ने उनकी दशा देख अमृतपान से इनकार कर दिया। इस शेर में इसी कहानी की ओर संकेत कर कवि कहता है कि जब ख़िज़्र जैसे महापुरुष की रहनुमाई से सिकन्दर को कुछ न मिला तो अब किस पर भरोसा किया जाय। ३—आशा। ४—क़ातिल गला न काटेगा तब भी मेरा ख़ून आँखों से होकर बह जायगा। ५—आदम को ख़ुदा ने स्वर्ग से निकाल दिया था क्योंकि उन्होंने निषिद्ध फल खा लिया था।

भरम खुल जाए ज़ालिम तेरे क़ामत की दराज़ी[1] का
अगर इस तुर्रए-पुर पेच-ओ-ख़म का पेच-ओ-ख़म निकले

हुई जिनसे तवक़्क़ा ख़स्तगी की दाद पाने की
वो हमसे भी ज़ियादा ख़स्तए-तेग़े-सितम निकले।[2]

मुहब्बत में नहीं है फ़र्क़ जीने और मरने का
उसी को देखकर जीते हैं जिस काफ़िर पै दम निकले॥

ख़ुदा के वास्ते पर्दा न काबे का उठा वाइज़
कहीं ऐसा न हो याँ भी वही काफ़िर सनम निकले।[3]

कहाँ मयख़ाने का दरवाज़ा 'ग़ालिब' और कहाँ वाइज़
पर इतना जानते हैं कल वो जाता था कि हम निकले।

(१०४)

नाकरदा[4] गुनाहों की भी हसरत की मिले दाद
यारब अगर इन करदा गुनाहों की सज़ा है।

१—तेरे क़द को लोग लम्बा कहते हैं, लेकिन यदि तेरी ज़ुल्फ़ों के पेच तो खुल जायँ वह तुझसे भी लम्बी निकलेगी और तेरे क़द के सम्बन्ध में जो भ्रम फैला है वह दूर हो जायगा। २—जिनसे आशा थी कि वे मेरा दुख दर्द सुनकर मुझे ढाढ़स देंगे उनको जाँचा तो हमसे भी ज़्यादा दुखी और समय के हाथों सताए निकले। ३—ए वाइज़! काबे की इतनी बड़ाई न कर और हमारा मुँह न खुलवा, नहीं तो हम उसे भी मन्दिर सिद्ध कर देंगे। काबा पहले एक मन्दिर था भी। ४—न किये हुए। जो गुनाह न कर सके उनकी अभिलाषा मन में रही। यदि किये हुए गुनाहों की सज़ा मिल सकती है तो उन गुनाहों की हसरत रखने का इनाम भी मिलना चाहिये जो नहीं कर सका।

(१०५)

क्या फ़र्ज़ है कि सबको मिले एक सा जवाब
आओ न हम भी सैर करें कोहे-तूर की।[१]

(१०६)

होगा कोई ऐसा भी कि 'ग़ालिब' को न जाने
शायर तो वो अच्छा है पै बदनाम बहुत है।

(१०७)

करता हूँ जमअ फिर जिगरे-लख़्त-लख़्त को
मुद्दत हुई है दावते-मिज़गाँ किये हुए।[२]

जी ढूँढता है फिर वही फ़ुरसत के रात दिन
बैठे रहें तसव्वुरे-जानाँ किये हुए।

(१०८)

गदा समझ के वो चुप था मेरी जो शामत आइ
उठा और उठके क़दम मैंने पासबाँ के लिये।

१—मूसा तूर पहाड़ पर ईश्वर से बात करने गए थे किन्तु एक झलक देख कर ही मूर्च्छित हो गए थे। चलो हम भी तूर पर चलें, शायद हमें ईश्वर के दर्शन हो ही जाएँ। २—अब जिगर के टुकड़ों को फिर इकट्ठा कर रहा हूँ। क्योंकि तेरी पलकों (मिजगाँ) के तीरों ने एक बार पहले मेरे जिगर के टुकड़े-टुकड़े कर दिये थे।

क़सीदा

हाँ माहे-नौ[१] सुनें हम उसका नाम
जिसको तू झुक के कर रहा है सलाम।

दो दिन आया है तू नज़र दमे-सुब्ह
यही अन्दाज़ और यही अन्दाम।[२]

बारे दो दिन कहाँ रहा ग़ायब
बन्दा आजिज़ है गर्दिशे-ऐयाम।[३]

उड़ के जाता कहाँ कि तारों का
आस्माँ ने बिछा रखा था दाम।[४]

मरहबा ऐ सुरूरे-ख़ास ख़वास[५]
जन्नदा ऐ निशाते-आमे-अवाम।

उज्र में तीन दिन न आनेके
लेके आया है ईद का पैग़ाम।[६]

---

*यह क़सीदा बहादुर शाह की शान में लिखा गया है।

१—नया चाँद, ईद का चाँद। २—चन्द्रमा अन्तिम तिथियों में दो दिन भोर में बिल्कुल नये चाँद की भाँति दिखता है। ३—दो दिन बिलकुल नहीं निकलता। अन्तिम पंक्ति में चाँद कवि को उत्तर देता है कि मैं काल-चक्र के कारण न उदय हो सका। बन्दा आजिज़ था अर्थात् मैं विवश था। ४—जाल। ५, ६—'मरहबा' और 'जन्नदा' शब्दों का अर्थ है 'धन्य हो' कहते हैं वे, विशिष्ट जनों के ख़ास सुरूर और हे साधारण जनों की खुशी, तू धन्य हो क्योंकि तू अपनी तीन दिनों की अनुपस्थिति के आरोप से बचने के लिये ईद का सन्देश लेकर उदय हुआ है।

उसको भूला न चाहिये कहना
सुब्ह जो जाय और आये शाम।[१]

एक मैं क्या कि सबने जान लिया
तेरा आग़ाज़ और तेरा अंजाम।[२]

राज़े-दिल मुझसे क्यों छिपाता है
मुझको समझा है क्या कहीं नम्माम।[३]

जानता हूँ कि आज दुनिया में
एक ही है उमीद-गाहे-अनाम।[४]

मैंने माना कि तू है हलक़ा बगोश
'ग़ालिब' उसका मगर नहीं है ग़ुलाम ?[५]

जानता हूँ कि जानता है तू
तब कहा है ब-तर्ज़े-इस्तिफ़हाम।[६]

१—दो दिन चाँद सुबह को भी नहीं निकलता और तीसरे दिन शाम को उदय होता है इस कारण 'ग़ालिब' ने उर्दू के एक पूरे मुहाविरे को उस पर लागू किया है कि सुबह का भूला यदि शाम को आजाय तो उसे भूला नहीं कहना चाहिये। २—अर्थात् तेरे आरम्भ और अन्त को सब जान गये कि तू जैसा पहले निकलता है, पूर्ण चन्द्र बन जाने के बाद भी आख़िर में तेरा रूप वही पहला सा हो जाता है। ३—नम्माम अर्थात चुग़ली खाने वाला। ४—अनाम अर्थात जन साधारण की आशाओं का एक ही केन्द्र है। यहाँ मतलब है बादशाह बहादुर शाह से। ५—तू जिसका ग़ुलाम है क्या ग़ालिब उसका ग़ुलाम नहीं ? ६—तू यह बात जानता है इसी कारण मैंने प्रश्न के रूप में कहा है।

मेह्र-ताबाँ को हो तो हो ऐ माह
क़ुर्बे-हर रोज़ा बर सबीले-दवाम।[१]

तुझ को क्या पाया रू-शनासी का
जुज़ ब तक़रीबे-ईदे-माहे सयाम।[२]

जानता हूँ कि उसके फ़ैज़ से तू
फिर बना चाहता है माहे तमाम।[३]

माह बन, माहताब बन मैं कौन
मुझको क्या बाँट देगा तू इनआम।[४]

मेरा अपना जुदा मआमला है
और के लेन देन से क्या काम।

है मुझे आरज़ूए-बख़्शिशे-ख़ास
गर तुझे है उमीदे-रहमते-आम।[५]

१—२ मेह्र-ताबाँ अर्थात सूर्य को प्रति दिन इस दरबार तक पहुँचने का गर्व प्राप्त हो तो हो, ('है' इसलिये नहीं कहा कि बदली में वह भी नहीं निकलता) परन्तु तुझे तो माहे-सयाम (रमज़ान मास) के बाद पड़ने वाली ईद के अतिरिक्त और किसी दिन यह सम्मान नहीं प्राप्त होता कि बादशाह के दर्शन कर सके। ३—मुझे मालूम है कि बादशाह के फ़ैज़ (कृपा) से तू फिर पूर्ण चन्द्र बन जायगा। ४—तू चन्द्र बन चाहे पूर्ण चन्द्र, मैं कौन बोलने वाला क्योंकि मुझे तो तू कुछ इनाम दे नहीं दिया। ५—अपनी महत्ता जताने के लिये अपनी बख़्शिश की आरज़ू को 'ख़ास' कहते हैं।

जो कि बख़्शेगा तुझको फ़र्रे-फ़रोग़
क्या न देगा मुझे मए-गुलफ़ाम ।[1]

जब कि चौदह मनाज़िले-फ़लकी
कर चुकी क़तअ तेरी तेज़िये-गाम ।[2]

तेरे परतव से हों फ़रोग़ पिज़ीर
कू-ओ-मुश्कू-ओ-सेहन-ओ मंज़र-ओ-बाम ।[3]

देखना मेरे हाथ में लबरेज़
अपनी सूरत का एक बिलूरीं जाम ।[4]

फिर ग़ज़ल की रविश पै चल निकला
तौसने-तबअ चाहता था लगाम ।[5]

ज़हे-ग़म कर चुका था मेरा काम
तुझको किसने कहा कि हो बदनाम ।[6]

१—हे चाँद, जो विधाता तुझे प्रकाश प्रदान करेगा, क्या वह मुझे लाल रंग की शराब न देगा। यह भी मतलब है कि तेरी चाँदनी में मुझे शराब मिलेगी तो मुझे दोहरा आनन्द आयेगा, मैं तुझे मिले इनाम अर्थात चाँदनी में हिस्सा बँटा लूँगा। २—चौदह मनाज़िले-फ़लकी अर्थात आकाश की वे चौदह मंज़िलें जिन्हें तीव्र गति से तय करके तू चौदहवीं का (पूर्ण) चन्द्र बना। ३—उस समय जब तेरी चाँदनी हर कूचा, हर महल, हर दृश्य और हर कोठे पर पड़ेगी। ४—तू देखना कि मेरे हाथ में तेरी ही जैसी शक्ल का एक बिल्लूरी जाम होगा। ५—शराब और प्याले की बात होने पर मेरे विचारों का घोड़ा फिर ग़ज़ल की राह पर दौड़ पड़ा मानो वह इशारा ही चाहता था। यहाँ से क़सीदा ग़ज़ल रूप ले लेता है इसीलिये फिर दो मतले कहे गये हैं। ये मतले ग़ज़ल या क़सीदे के शुरू में ही आते हैं। मतला उस शेर को कहते हैं जिसके दोनों चरण तुकान्त हों।

मय ही फिर क्यों न मैं पिये जाऊ
ग़म से जब हो गई हो ज़ीस्त हराम ।[1]

बोसा कैसा यही ग़नीमत है
कि न समझें वो लज़्ज़ते-दुशनाम ।[2]

काबे में जा बजायँगे नाक़ूस
अब तो बाँधा है दैर में अहराम !

इस क़दह का है दौर मूझको नक़्द
चर्ख़ ने ली है जिस से गर्दिश वाम ।[4]

बोसा देने में उनको है इनकार
दिल के लेने में जिनको था इबराम ।[5]

१—ज़ीस्त हराम हो गई अर्थात जीवन दूभर हो गया। २—लज़्ज़ते-दुशनाम यानी गाली का स्वाद। यदि प्रिय जान गया कि उसकी गालियों में भी मुझे मज़ा मिलता है तो वह कहीं गाली देना भी न छोड़ दे, बोसे या चुम्बन की तो बाद ही दूर रही। ३—मंदिर (दैर) में ना.कूस (शंख) बजाया जाता है और काबे में अहराम (हज के समय पहना जाने वाला बे सिला कपड़ा) पहना जाता है पर हम तो प्रेम के मतवाले हैं। हम न काबे को मानते हैं न मंदिर को। आज यदि अहराम बाँध कर मंदिर में आगये तो कल काबे में जाकर शंख फूँक आयेंगे। ४—क़दह = प्याला, च.र्ख़ = आकाश, वाम = क़र्ज़। यानी मैं वह 'ज्ञान का प्याला पी रहा हूँ जिससे आकाश ने गर्दिश उधार ली है, या मैं ज्ञान की वह मदिरा पी रहा हूँ जिससे मस्त होकर आकाश नाच रहा है। ५—इबराम = ज़िद, हठ।

छेड़ता हूँ कि उनको .ग़ुस्सा आय
क्यों रखूँ वरना ग़ालिब अपना नाम ।[१]

कह चुका मैं तो सब कुछ अब तू कह
ए परी चेहरा पैके-तेज़-ख़राम ।[२]

कौन है जिसके दर पै नासिया सा
हैं मह-ओ-मेह्र ज़हरा-ओ-बहराम ।[३]

तू नहीं जानता तो मुझसे सुन
नामे-शाहिन्शहे-बलन्द मक़ाम ।[४]

क़िबलए-चश्म-ओ-दिल बहादुर शाह
मज़हरे-.ज़ुल जलाल वल इकराम ।[५]

१—ग़ालिब के माने हैं विजयी। कहते हैं मैंने अपना नाम ग़ालिब इसलिये रख लिया है कि वह अपने को मग़लूब (पराजित) समझें इस छेड़ से .ग़ुस्से में आकर मुझ पर बिगड़ें और मेरी ओर उनका ध्यान रहे। २—चाँद को तीव्र गामी सुन्दर संदेश वाहक कह कर पूछते हैं कि मैं तो जो कहना था सब कह चुका, अब तू भी कुछ कह। ३—नासिया सा=सिजदा करने वाला। कहते हैं कि वह कौन है जिसके द्वार पर चाँद सूरज और ज़हरा व बहराम (नक्षत्रों के अरबी नाम) सिर झुकाते हैं। ४, ५—मुझसे सुन कि उसका नाम शहिन्शाह बहादुर शाह है और वह आँखों और दिल का क़िबला (पूज्य स्थान) है और बड़ी शान शौकत वाला है।

शहसवारे - तरीक़ए - इन्साफ़
नौबहारे - हदीक़ए - इस्लाम ।[१]

जिसका हर फ़ेल सूरते-एजाज़
जिसका हर क़ौल मानये-इलहाम ।[२]

बज़्म में मेज़बाने-क़ैसर-ओ-जम
रज़्म में ऊस्तादे-रुस्तम-ओ-साम ।[३]

ए तेरा लुत्फ़ ज़िन्दगी अफ़ज़ा
ए तेरा अह्द फ़र्रुख़ी फ़रजाम ।[४]

चश्मे-बद दूर ख़ुसरुआना शकोह
लौहश अल्लाह आरिफ़ाना कलाम ।[५]

जाँ निसारों में तेरे क़ैसर-ओ-जम
जुरआ ख़्वारों में तेरे मुरशिदे-जाम ।[६]

१हदीक़ए-इस्लाम=इस्लाम का बाग़। २-जिसका हर कार्य चमत्कार रूप है और जिसकी हरबात अपनी सच्चाई के कारण ईश्वरीय बात लगती है। ३-जो महफिल में क़ैसर (रूम का सम्राट) और सम्राट जमशेद का आतिथेय बनता है और रणक्षेत्र में रुस्तम और साम (रुस्तम का दादा) का उस्ताद है। ४-अब बादशाह को सम्बोधित कर उसकी तारीफ़ करते हैं। कहते हैं कि तेरी कृपा जीवन दायिनी है और तेरा राज काल शुभ परिणाम वाला है। ५-तेरी शाही शान-शौकत को बुरी नज़र न लगे, तेरी ज्ञान पूर्ण बातों का क्या कहना। ६-जुरआ ख़्वार=पीने वाले। मुरशिदे-जाम=जमशेद।

MODERN ... POONA 5.

वारिसे-मुल्क जानते हैं तुझे
एरज़-ओ-तूर-ओ-.ख़ुसरु-ओ-बहराम ।[१]

ज़ोरे-बाज़ू में जानते हैं तुझे
गेव-ओ-गोदर्ज़-ओ-बीज़न-ओ-रहहाम ।[२]

मरहबा मूशिगाफ़िये-नावक
आफ़रीं आबदारिये-समसाह ।[३]

तीर को तेरे तीरे-ग़ैर हदफ़
तेग़ को तेरी तेग़े-ख़स्मे-नायम ।[४]

रअद का कर रही है क्या दम बन्द
बर्क़ को दे रहा है क्या इल्ज़ाम ।[५]

तेरे फ़ीले-गराँ जसद की सदा
तेरे रख़्शे-सुबुक इनाँ का ख़राम ।[६]

१-एरज, तूर, .ख़ुसरू और बहराम ईरान के कयानी बादशाहों के नाम हैं। २-गेव, गोदर्ज़, बीज़न और रहहाम ईरान के प्रसिद्ध पहलवानों के नाम हैं जिनका वर्णन फ़िरदौसी ने अपने महाकाव्य 'शाहनामा' में किया है। ३-तेरा तीर बाल को भी भेद डालता है। और तेरी तलवार की आबदारी भी धन्य है। ४-तेरा तीर दूसरे के तीर को निशाना बना देता है और तेरी तलवार दुश्मन की तलवार में ऐसे घुस जाती है जैसे तेरी म्यान में। ५, ६—रअद अर्थात् बिजली। तेरी आवाज़ विशालकाय हाथी की चिंघाड़ के समान है जो बादल की गरज को भी माँद करती है और तेरे तीव्रगामी घोड़े की चाल बिजली को भी मंथर गति से चलने का इलज़ाम देती है।

फ़न्ने-सूरत गरी में तेरा गुर्ज़
गर न रखता हो दस्तगाहे-तमाम ।[१]
उसके मज़रूब के सर-ओ-तन से
क्यों नुमायाँ हो सूरते इदग़ाम ।[२]
जब अज़ल में रक़म पिज़ीर हुए
सफ़ाहाए-जयालियो-ऐयाम ।[३]
और इन औराक़ में ब-किल्के-क़ज़ा
मुजमला मुन्दरज हुए अहकाम ।[४]
लिख दिया शाहिदों को आशिक़-कुश
लिख दिया आशिक़ों को दुश्मने-काम ।[५]
हुक्मे-नातिक़ लिखा गया कि लिखें
ख़ाल को दाना और ज़ुल्फ़ को दाम ।[६]
आतिश-ओ-आब-ओ-बाद-ओ-ख़ाक ने ली
वज़्अ सोज़ो-ओ-नम-ओ-रम-ओ-आराम ।[७]

१, २—तेरा गुर्ज़ (गदा) यदि चित्रकारी में प्रवीण न होता तो उसकी मार से सिर तन में कैसे धँस जाता और कैसे एक नई सूरत बन जाती। इदग़ाम=विलीनो करण। ३, ४, ५, ६, ७—ये पाँच शेर भी क्रम बद्ध हैं। कहते हैं जब सृष्टि की रचना के समय दिन और रात के पृष्ठ लिखे गये और उनमें संक्षेप में सब हुक्म दर्ज किये गये तो रूप वालों को प्रेमियों का क़ातिल लिख दिया गया और प्रेमियों को उनके दुश्मनों की इच्छानुसार परेशान और निराश। हुक्म दिया गया कि आकाश को तीव्र गामी गुम्बज लिखो, तिल को दाना और ज़ुल्फ़ को दाम अर्थात जाल लिखो। इसी हुक्म के अनुसार आग ने जलन, पानी ने नमी, हवा ने इधर उधर भागने और मिट्टी ने स्थिर रहने के गुण ग्रहण कर लिये।

मेहे-रख़शाँ का नाम ख़ुसरुए-रोज़
माहे-तावाँ का इस्म शहनए-शाम ।[१]
तेरी तौक़ीए-सलतनत को भी
दी बदस्तूर सूरते-इरक़ाम ।[२]
कातिबे-हुक्म ने बमोजिबे-हुक्म
इस रक़म को दिया तराज़-दवाम ।[३]
है अज़ल से रवानिये-आग़ाज़
हो अबद तक रसाइये-अंजाम ।[४]

१, २ ३—इसी प्रकार सूर्य का नाम दिन का बादशाह रखा गया और चाँद का नाम शाम का कोतवाल पड़ गया। इसी प्रकार उन पृष्ठों में तेरे नाम राज करना लिखा गया और विधाता के आदेशानुसार लिखने वाले ने तेरे नाम के राज-काल को चिरस्थायी लिख दिया। ४—मानो तेरा राज काल आदि काल से शुरू होता है• और ईश्वर से प्रार्थना है कि वह अनन्त काल तक बना रहे।